

# रचना

## समय

जून-जुलाई 2016



अरबी कवि  
अद्वनीस पर खास  
इटालो काल्विनो हेनरिख बोल स्वेतलाना अलेक्सियेविच  
आल्फोंस दोदे स्टीफन ज़िग मनोज कुमार पांडेय  
विष्णु नागर लीलाधर मंडलोई की रचनाएँ

# स्वच्छता से समृद्धि



## स्वच्छ मध्यप्रदेश



शिवराज सिंह चौहान, मुख्यमंत्री, मध्यप्रदेश

- मध्यप्रदेश में 54 लाख से ज्यादा ग्रामीण घरों में शौचालय बने।
- 2400 से ज्यादा ग्राम पंचायतें खुले में शौच से मुक्त।
- सभी स्कूलों एवं आंगनवाड़ी में शौचालय निर्माण प्रगति पर।
- दो अक्टूबर 2019 तक सभी घरों में होंगे शौचालय।
- इंदौर जिला देश में स्वच्छता में दूसरे नम्बर पर।



**सम्पादक**  
हरि भटनागर  
बृजनारायण शर्मा  
अनिल जनविजय

•

**सहयोग**  
रवि रतलामी  
ए. असफल  
रोली जैन

आवरण पर  
अरबी कवि अदूनीस

मूल्य : 60 रु.

•

ग्राहकीय एवं सम्पादकीय पता :

**रचना समय**

हरि भटनागर / बृजनारायण शर्मा  
197, सेक्टर-बी सर्वधर्म कालोनी, कोलार रोड,  
भोपाल - 462042 (मध्यप्रदेश)  
मोबा. : 9424418567, 9826244291  
E-mail : haribhatnagar@gmail.com

•

**शब्द संयोजन एवं मुद्रक :**

बॉक्स कॉरोगेटर्स एण्ड ऑफसेट प्रिंटर्स,  
14-बी, सेक्टर-आई, इंडस्ट्रियल एरिया,  
गोविंदपुरा, भोपाल : 2587551

•

पत्रिका में प्रकाशित रचनाओं के लिए  
सम्पादकों की सहमति अनिवार्य नहीं।  
सम्पादक पूर्णतः अवैतनिक।

**रचना समय**

जून-जुलाई - 2016

## यह अंक

किसी आयरिश लेखक ने कहा है कि कहानी गुरिल्ला लड़ाई है जो सरहदों पर लड़ी जाती है— इस कथन में आंशिक संशोधन की ज़रूरत है कि रचना गुरिल्ला लड़ाई है जो हर जगह लड़ी जाती है— उसे लड़ने के लिए सरहद पर जाने की ज़रूरत नहीं!— इस वाक्य के आलोक में देखें तो कह सकते हैं कि लेखक को एक सैनिक की तरह हर मोर्चे पर युद्ध लड़ना होता है। अगर वह दृष्टिसम्पन्न लेखक है तो उसे बगीचे में बैठकर तितलियों के उड़ने और फूलों के खिलने और उनकी खुशबू मात्र पर ही क़लम चलाकर अपने लेखन की इतिश्री मान लेना पर्याप्त नहीं, बेमानी होगा— उसे इन विषयों के साथ समय— समाज, देश—काल पर नज़र डालनी होगी कि आज जो समाज है, देश या विश्व है— किस दिशा में जा रहा है— कौन है जो उसे फुटबॉल की तरह ले जा रहे हैं— और यह असमान व्यवस्था आख़िर किसके पक्ष में है— उपजीवियों—शोषकों के पक्ष में या पीड़ितों के पक्ष में। कौन है जो हमारी स्थानीयता, बोली—बानी, अस्मिता— जातीय स्मृति तक को मूल से विच्छेदित कर रहा है... ऐसा सोचते—लिखते हुए रचनाकार अपने देश का होते हुए, सरहद पार कर समूचे विश्व का अपना रचनाकार हो जाता है।

अरबी भाषा के विख्यात रचनाकार अदूनीस ऐसे ही रचनाकार हैं जिन्होंने अपनी दृष्टिसम्पन्नता के चलते अरबी साहित्य को आधुनिकता—बोध से लैस किया। 1930 में सीरिया के एक गाँव में जन्मे अदूनीस ने जब लिखना प्रारंभ किया उस वक़्त द्वितीय विश्वयुद्ध समाप्त हो चुका था और अमेरिका की षडयंत्रकारी नीति के चलते इजराइल राष्ट्र की स्थापना ने अरबी अस्मिता को गहरे संकट में डाल दिया था— फलस्वरूप हर तरफ़ विस्थापन, निराशा—हताशा और जातीय पहचान के सवाल जनता के दिलों—दिमाग़ में दरार डाल रहे थे— ऐसे वक़्त में अदूनीस ने अरबी सियासत में हिस्सेदारी लेकर जो भी रचा वह अरबी जनता के पक्ष में था— उसकी पीड़ा, उसकी तकलीफ़ को ज़बान दी और उन विभाजनकारी शक्तियों के विरुद्ध आवाज़ बुलंद की जो अरबी जनता को एक—दूसरे से काट रही थी— यही वजह थी कि अपने बागी तेवर के चलते उन्हें कारावास की सज़ा भुगतनी पड़ी— यह बात यहीं विराम नहीं लेती— उन्हें सीरिया को अलविदा कहना पड़ा और अंततः लेबनान की राजधानी बेरुत में शरण लेनी पड़ी। यहाँ भी अदूनीस अपने तलख़—बागी तेवर को लगातार तीव्र करते दीखते हैं। ‘अमेरिका के लिए एक क़ब्र’ कविता सिरिज़ उनके बागी तेवर का एक अनोखा उदाहरण है :

लफ़ज़ इसलिए बेजान हो गये कि तुम्हारी ज़बानों ने / नक़लचीपन के नाम पर, बोलने की आदत  
छोड़ दी / लफ़ज़? तुम उसकी आग का पता पाना चाहते हो / तो लिखो! मैं कहता हूँ : लिखो /  
नक़ल करो, मैं नहीं कहता, न ही यह कि उनकी ज़बान को अपनी लिखावट में उतारो।

अदूनीस अरबी भाषा के ऐसे लोकप्रिय जातीय कवि हैं जिनकी कविताओं में एक तरफ़ उमर ख़य्याम, रूमी, शेख़ सादी, सनाई, अमीर खुसरो का सूफियाना अंदाज़ है तो वहीं दूसरी तरफ़ बॉदलेयर, कवाफ़ी, इलियेट और वाल्ट व्हिटमैन की काव्य संवेदना का गहरा असर। बावजूद इसके अदूनीस में एक ऐसी आधुनिक विश्व—दृष्टि है जो सम्पूर्ण मानवता के पक्ष में अपना स्वर बुलंद करती है। अदूनीस बेरुत में रहते हैं और 86 वर्ष की आयु में अभी भी रचनारत हैं। ‘रचना समय’ के प्रस्तुत अंक में हम अदूनीस को ख़ास कवि के रूप में प्रकाशित कर रहे हैं। रचनाओं का अनुवाद सुरेश सलिल ने किया है।

इसी के साथ हम इटालो काल्विनो, हेनरिख बोल, स्वेतलाना अलेक्सियेविच, आल्फ़ोंस दोदे, स्टिफन ज़्विग की रचनाएँ प्रस्तुत कर रहे हैं जिनके अनुवाद क्रमशः चंदन पाण्डेय, श्रीनिकेत मिश्र और अनुराधा महेन्द्र ने किए हैं। महत्त्वपूर्ण रचनाकार मनोज कुमार पाण्डेय की कहानी है जो साम्प्रदायिक विद्रूप को उजागर करती है।

इस अंक से हम रचनाकार विष्णु नागर और लीलाधर मंडलोई के स्तंभ प्रारंभ कर रहे हैं जो नियमित रूप से हर अंक में प्रकाशित होंगे जो समय—समाज की विडम्बना और उसके सच पर बेबाक टिप्पणी दर्ज़ करते रहेंगे।

— हरि भटनागर

### **अरबी कविता**

अदूनीस 05

अनुवाद  
सुरेश सलिल

### **कहानी**

मनोज कुमार पाण्डेय 31

### **कहानी / दस्तावेज़**

इटालो काल्विनो 36

अंग्रेजी से अनुवाद  
चंदन पाण्डेय

हेनरिख बोल 41

अंग्रेजी से अनुवाद  
चंदन पाण्डेय

स्वेतलाना अलेक्सियेविच 43

अंग्रेजी से अनुवाद  
चंदन पाण्डेय

आल्फोंस दोदे 47

मूल फ्रेंच से अनुवाद  
श्रीनिकेत कुमार मिश्र

स्टीफन ज़्विग 55

अंग्रेजी से अनुवाद  
अनुराधा महेन्द्र

### **कथार्थ**

विष्णु नागर 70

### **नान्दी-पाठ**

लीलाधर मंडलोई 73

सुरेश सलिल

## आधुनिक अरबी कविता और अदूनीस

अदूनीस आधुनिक अरबी कविता के अग्रणी कवि ही नहीं, विश्व व्यक्तित्व हैं। आज दुनिया भर के साहित्यिक हलकों में उन्हें अरबी कविता का पर्याय माना जाता है।

अरबी कविता का इतिहास बहुत पुराना है, कोई डेढ़ हजार साल से भी पुराना। शुरू में अरबी कविता का सबसे लोकप्रिय फ़ार्म 'क़सीदा' था। विभिन्न क़बीलों के कवि, अपने अपने क़बीले के सरदारों और, जाँबाज़ों के कारनामे ओजस्वी स्वर और जादुई लहजे में गाया करते थे। यही कविता की समाजी और सियासी भूमिका थी। तब अरबी कविता का रूप वाचिक (ज़बानी) हुआ करता था, और वाचिक कवियों को 'राबिया' कहा जाता था।

इस्लाम के वुजूद में आने के बाद, हज़रत, मुहम्मद के जीवनकाल में अरबी साहित्य का परिदृश्य थोड़ा सा बदला। 'कुर्आन' की रचना के साथ-साथ प्रमुखता काव्यात्मक (तुकांत) गद्य की हो गई। डेढ़-दो सौ सालों के वक्फ़े के बाद, अरबी कविता की रंगत काफ़ी कुछ आनंदवादी ग़ौर की गई। बेशक अरबी साहित्य में ज्ञान-विज्ञान की शाखाएँ बहुत समृद्ध हुईं। स्पेन तक अरबों के फैलाव के बाद, जहाँ उस ज्ञान-विज्ञान से यूरोप को भी फ़ायदा हुआ, वहीं अरबी कविता में भी नये दौर की शुरुआत हुई और इस नयी शुरुआत के अक्स स्पेन के अरब कवियों में ख़ासतौर से ग़ौर किये गये। तब भी यह मानना होगा कि कविता की मुख्यधारा, अरबी से मुड़कर फ़ारसी जुबान में लहराती लक्ष्य की जाने लगी। उमर ख़य्याम, रूमी, शेख़ सादी, सनाई, अत्तार, हाफ़िज़, शब्सतरी,

अमीर खुसरो की सूफी भावधारा और फ़िरदौसी के 'शाहनामा' की महाकाव्यात्मक उठान ईरान की भौगोलिक और कालगत सीमाएँ लाँघ कर लगभग समूचे एशिया और अधिकांश यूरोप की धरती पर ठाठें मारती नज़र आई। ईरानी कविता का यह असर आज भी कम नहीं हुआ है।

इस सबका यह मतलब न निकाला जाय कि अरबी कविता का विकास रुक गया। आगे भी अरबी कविता फलती-फूलती रही, उसने विकास के डग भरे और अरबी अवाम कविता में ही अपनी भावाभिव्यक्ति पाती रही। लेकिन सच यह भी है कि दूसरे विश्वयुद्ध के बाद, खासतौर से इज़राइल को यहूदी राष्ट्र के बतौर कायम करने की अमरीकी-यूरोपी राजनीति के जरिये अरब क्षेत्र के साथ जिस तरह का नस्लवादी-प्रभुत्ववादी बर्ताव शुरू हुआ, उसके परिणाम-स्वरूप अरबी अस्मिता का गंभीर संकट पैदा हुआ और अरबी कविता का स्वर सिरे से बदल गया।

आधुनिक अरबी कविता में राष्ट्रीय और जातीय पहचान, इतिहास, भाषा और संस्कृति का निरंतर गहराता संकट और उससे उपजी उदासी, अवसाद और गुस्सा अपने भरपूर आवेग और संवेदना के साथ उभरते गौर किये जाते हैं। इन्हीं अर्थों में, अदूनीस समकालीन विश्व कविता में अरबी कविता के सबसे प्रमुख और प्रभावशाली प्रवक्ता हैं।

\*

अदूनीस का पैतृक नाम अली अहमद सईद है। अपना तख़ल्लुस उन्होंने यूनानी पौराणिकी के एक चरित्र से लिया है, जिसकी परवरिश दरख़्त के एक तने में हुई थी और बाद में जो सौंदर्य की देवी बीनस का प्रियपात्र बना।.. अदूनीस का जन्म 1930 में सीरिया के एक गाँव में हुआ। स्कूली पढ़ाई के बाद, 1950 में वे साहित्य और दर्शनशास्त्र के उच्च अध्ययन के लिए दमिश्क यूनिवर्सिटी में दाख़िल हुए। इसी दरमियान, उस दौर के जाने माने सियासतदौं अन्तुन साद से अदूनीस का सम्पर्क हुआ और उन्हें अरबी सियासत में हिस्सेदारी करते गौर किया गया। कोई छह महीने उन्हें हवालात की हवा भी खानी पड़ी। जेल से बाहर आने के बाद अदूनीस ने तय किया कि एक लेखक या कवि सक्रिय राजनीति की बजाय राजनीति-सजग रचनाकार की भूमिका

में ही उपयुक्त है। वहीं वह अपनी प्रतिभा और क्षमता का बेहतर राजनीतिक उपयोग कर सकता है।

इस फ़ैसले के बाद अदूनीस अपनी पत्नी और जानी-मानी नक्क़ाद (आलोचक) ख़ालिदा सईद के साथ, लेबनान की राजधानी बेरुत चले गये और वहीं बस गये। 1950 में दोनों को वहाँ की नागरिकता भी मिल गई।

लेबनानी नागरिकता हासिल करने के लिए एक साल बाद अदूनीस ने अपने साथी अरबी कवि यूसुफ़ अल ख़ाल के साथ मिलकर अवांगार्ड अरबी शाइरी की पत्रिका 'शे'र' शुरू की, और एक प्रकाशन संस्था भी। कई साल तक इस सहयोगी योजना में शिरकत करने के बाद, 1968 में, अदूनीस ने प्रयोगशील और प्रगतिशील कविता और साहित्य विमर्श के लिए अपनी खुद की पत्रिका 'मवाकिफ़' (पड़ाव) का प्रकाशन शुरू किया। इसी पत्रिका के एक शुमार की शक्ल में, 1970 में, अदूनीस के कविता संग्रह 'खाक और गुलाबों के दरमियान का वक़्त' (वक़्त बेन अल-रमाद व अल-वर्द) का प्रकाशन हुआ। इसमें उनकी दो कविता सीरीज़ शामिल की गई थीं- 'क्रबीलाई सरदारों की दास्तान' (मुक़द्दमा लि- तारीख़ मुलूक अल तवाइफ़) और 'ये है मेरा नाम' (हज़ा हो इस्मीं)। इन कविताओं में 1967 के अरब- इज़रायल युद्ध में अरब की हार, जो सिर्फ़ राजनीतिक हार नहीं थी, बल्कि अरब संस्कृति और अरब बौद्धिकता; कुल मिलाकर अरब-अस्मिता की हार थी, की खातिर बहुत ही असरदार रूप में संजीदगी के साथ अभिव्यक्त हुई है। गौरतलब यह भी है कि 'क्रबीलाई सरदारों की दास्तान' सीरीज़ का समर्पण उस दौर के सर्वमान्य अरब नेता और मिस्त्र के राष्ट्रपति अब्दुल ग़माल नासिर को किया गया था। यह भी उल्लेखनीय है, कि 'खाक और गुलाब के दरमियान का वक़्त' से पहले अदूनीस के पाँच कविता संग्रह शाये हो चुके थे।... दो साल बाद, 1972 में 'खाक और गुलाब के दरमियान का वक़्त' का दूसरा संस्करण आया तो उसमें अदूनीस ने अपनी एक और कविता सीरीज़ 'न्यूयॉर्क के लिए एक क़ब्र' (क़ब्र मीं अजल न्यूयॉर्क) भी जोड़ दी। इस सीरीज़ में, लोकतंत्र के प्रबल पक्षधर महान अमरीकी कवि वाल्ट व्हिटमैन और उनकी कविता के हवाले से, अमरीका का तथाकथित लोकतंत्री मुखौटा एक आहत अरबी



कवि के ऐसे लबो-लहजे में उघड़ा है, कि अरब की अपनी आहत अस्मिता के साथ-साथ खुद अमरीका के हाशिये पर के नागरिक समुदायों की वेदना और गुस्सा भी उसमें से ध्वनित होता सुना जा सकता है- कुछ कुछ अमरीकी बीटनिक कवि एलेन गिंसबर्ग की, एक ज़माने की बेहद विवादास्पद, प्रभावशाली कविता 'हाउल' के स्वरमान में।

★

अदूनीस अरब की नयी कविता को कविता की बजाय 'विज्ञान' (रूया) कहना पसंद करते हैं और यह कि शब्द को कविता में अपना सारतत्त्व संक्रमित करना होगा। उसे अपना आकार बढ़ाना और उसमें स्वाभाविक से अधिक को समाहित करना होगा, तब शब्द एक नयी उर्वरता से समृद्ध गर्भाशय में रूपांतरित हो जाएगा। अदूनीस ज़ोर देकर कहते हैं कि हम कवियों को शब्दों के, ऊपरी और सतही मायनों से आगे जाकर, भीतर दाखिल होना होगा और शाश्वत सत्यों को निकाल बाहर लाना होगा। उनका यह भी मानना है कि अरब का कवि सदियों से एक बंद दुनिया में रहता आया है, भविष्य के प्रति उसमें एक किस्म की बेखयाली-सी रही है, इसीलिए वह बार-बार बीते हुए की ओर वापस लौटता है, लेकिन इस प्रक्रिया में उसे पुरानी आग को एक नयी लपट में तब्दील करना होगा।

इस्लामी आचार संहिता द्वारा सियासत और कलाओं को नियंत्रित करने के सवाल पर अदूनीस का नज़रिया किंचित् आलोचकीय रहा है, लेकिन इस नज़रिये की जकड़बंदी से वह खुद को परे रखते हैं। मिसाल के तौर पर, दसवीं सदी के रहस्यवादी अल-निफ़ारी का बहुत गहरा असर उनके सोच पर रहा है, जिसके अक्स 'यह है मेरा नाम' और 'न्यूयॉर्क के लिए एक क़ब्र' सीरीज़ की कविताओं में उभरे हैं। उन्होंने अपने अदबी रिसाला का नाम 'मवाक़िफ़' भी अल-निफ़ारी की एक कृति 'किताब अल-मवाक़िफ़ व अल-मुखातबात' से लिया। इसके अलावा 'क़बीलाई सरदारों की दास्तान' की कविताओं में 'अली' का ज़िक्र बार-बार हुआ है। 'अली'

का हवाला एक ओर अगर हज़रत मुहम्मद के भतीजे और दामाद और चौथे ख़लीफ़ा अली इब्न अबी तालिब से जुड़ा है, तो दूसरी ओर अदूनीस के अपने पिदरी नाम अली अहमद सईद से भी।

पीछे इस बात का ज़िक्र आया है कि अदूनीस ने 'क़बीलाई सरदारों की दास्तान' का समर्पण मिस्त्र के महान अरब राजनेता गमाल अब्दुल नासिर को किया। अन्यत्र भी उन्होंने नासिर की 'पान अरब' (एकीकृत अरब) नीति का उल्लेख बार-बार किया है और खुद को इस नीति का समर्थक मानते हैं।

कई आलोचकों ने अदूनीस को द्वितीय के अतिरिक्त बॉदलेयर, कवाफ़ी, इलियेट की परम्परा में देखा है। द्वितीय का उल्लेख 'न्यूयॉर्क के लिए एक क़ब्र' सीरीज़ के हवाले से हो चुका है। अन्यो के संदर्भ में इस पंक्तिकार का मानना है कि अदूनीस की काव्य संवेदना और काव्य-भाषा पर महान तुर्की कवि नाज़िम हिकमत और स्पेन के कवि लोर्का का असर ज़्यादा गहरा है।

अदूनीस एक कवि के साथ-साथ, उच्च शिक्षा प्राप्त, अरबी भाषा और साहित्य के स्कॉलर भी हैं। डेढ़ दर्जन कविता संग्रहों के अतिरिक्त उनकी अनेक साहित्येतिहास और साहित्यालोचन संबंधी पुस्तकें भी प्रकाशित हुईं और दुनिया भर में चर्चित हुईं। एक साहित्यकार के रूप में अनेक राष्ट्रीय-अंतरराष्ट्रीय पुरस्कारों से उन्हें नवाजा गया और नोबेल के लिए भी कई बार उनका नाम विचारार्थ पेश किया गया। पेशे से वे शिक्षक हैं और कई विश्वविख्यात यूनिवर्सिटीज से संबद्ध रहे हैं।

★

अदूनीस की कविताओं की इस अनुवाद प्रस्तुति में उनकी उपरोल्लिखित कविता सीरीज़ के अतिरिक्त कुछ कविताएं 'अल. किताब' काव्य संग्रह से भी ली गई हैं। ये हिंदी अनुवाद **शौकत एम. त्रौ** के अंग्रेजी अनुवादों की मदद से किये गये हैं।



अदूनीस

## अदूनीस की कविताएँ

अनुवाद : सुरेश सलिल

### न्यूयॉर्क के लिए एक क़ब्र\*

1

धरती अब तक नाशपाती की शक्ल में नक्श हुई है,  
याने कि स्तन,  
तब भी स्तन और क़ब्र में एक बुनियादी फ़र्क है :  
न्यूयॉर्क एक चौपाया तहजीब, हर तरफ़ क़त्ल  
या क़त्लगाह का रास्ता  
और डूबती हुई आहें-कराहें।

न्यूयॉर्क,  
एक औरत— बुत एक औरत का—  
एक हाथ में काठ-कबाड़-सा कुछ, जिसे इतिहास कहे  
जाने वाले दस्तावेज़ नाम देते हैं 'लिबर्टी',  
और दूसरे हाथ से एक बच्ची का गला घोटती हुई,  
जिसका काम धरती।

न्यूयॉर्क,  
अलक़तरे के रंग का जिस्म, जिसकी कमर में लिपटी एक

---

\* न्यूयॉर्क के लिए एक क़ब्र (क़ब्र में अजल न्यूयॉर्क) पुस्तक से

गिली कमरपेटी, उसका चेहरा एक बंद रोशनदान...  
 मैंने कहा, इसे वाल्ट व्हिटमैन खोलेगा- “मैं  
 कहता हूँ कूट शब्द आदिम”<sup>1</sup> —किन्तु उसे एक अड़ियल  
 अल्लाह के सिवा कोई काम नहीं देता। क़ैदी, गुलाम,  
 हताश, चोर, बीमार उगलते हुए उसके गले से।<sup>2</sup>  
 कोई निकास न कोई रास्ता। और मैंने कहा ‘बुकलिन  
 ब्रिज!’ लेकिन ये वो ब्रिज या पुल है, जो व्हिटमैन  
 को वाल स्ट्रीट से जोड़ता है, ‘घास की पत्तियों’ को  
 कागज़ के डॉलरों से जोड़ता है?...

न्यूयॉर्क-हार्लेम।

कौन आता है रेशमी गिलोटिन में, कौन जाता है हडसन  
 जितनी लम्बी क़ब्र में? फूट पड़ो, ओ आँसुओं के अनुष्ठान!  
 लिपट जाओ परस्पर, ओ समापन के खिलवाड़ो।  
 उदास, हताश, गुलाब, चंबेली : रौशनी पैनाती है अपनी  
 नोकें, और चुभन की जगह उगा है सूरज। जाँघों के बीच  
 पोशीदा ज़ख़्म। क्या तुम पक गये हो? मौत का परिंदा  
 तुम्हारे करीब पहुँच गया है, सुनी है तुमने मौत की  
 काँव काँव? एक रस्सी और एक गर्दन उदासी बुनती  
 हुई, और खून में वक़्ते-आख़िर की उदासी।

न्यूयार्क- मैडीसन- पार्क एवेन्यु-हार्लेम।

काहिली काम से मिलती-जुलती, काम काहिली से  
 मिलता जुलता, दिलों में स्पंच ठुसी हुई, हाथ  
 सरकंडों जैसे फूले हुए। और गंदगी के ढेरों से, और  
 इम्पामर स्टेट के मुखौटों से स्लैब-दर-स्लैब  
 झूलती शोहरतों में उभरता इतिहास।  
 अंधी नज़र नहीं बल्कि खोपड़ी है  
 बंजर बात नहीं बल्कि जुबान है

न्यूयॉर्क-वाल स्ट्रीट एक सौ पच्चीसवीं

स्ट्रीट फ़िफ़्थ एवेन्यु-मेडुसा जैसा एक ज़िन्न कंधों के  
 दरमियान चढ़ता है

एक बाज़ार सभी नस्ल के गुलामों का

1. 2. दोनों संदर्भ अमरीका के महान लोकलांत्रिक कवि वाल्ट व्हिटमैन की काव्यकृति  
 ‘लीब्ज आफ़ ग्रास’ और उसमें संकलित कविता ‘सांग ऑफ़ माइसेल्फ़’ से संबंधित।

इंसानियत शीशे के बगीचों में उगाये गये पौधों जैसी  
अदृश्य और अभागे  
चमगादड़ों के जाले में धूल की तरह रले, - मिले :

धूप एक जनाज़ा है  
दिन एक काला ड्रम।

2

चूर-चूर हो जाओ ओ लिबर्टी के बुत,  
तुम जिस अक्लमंदी से धँसाये हुए हो सीनों में नाखून  
वो गुलाबों की अक्लमंदी की नक़ल है।  
फिर दहाड़ रही है हवा पूरब से  
तंबुओं और आसमानी इमारतों को उखाड़ती हुई  
और दो पंख लिखते हैं :

एक घटिया ककहरा उभर रहा है पछाहीं लहरों से  
और धूप येरूशेलम के बाग़ के एक दरख़्त की दुख़्तर है

इस तरह परचाता हूँ मैं अपनी आग  
नई तरह से करता हूँ शुरुआत  
गढ़ता हूँ और निशानदही करता हूँ :

न्यूयॉर्क

पुआल-भरी एक औरत, उसका बिस्तर ख़ालीपन से ख़ालीपन के बीच  
डोलता हुआ, और सिर के ऊपर की छत झरती हुई :  
हरेक लफ़्ज़ किसी गिरावट का निशान  
हरेक लम्हा एक बेलचा या एक कुदाल<sup>1</sup>  
और दायें-बायें जिस्म, जो रूप-रंग-रस-गंध-स्पर्श  
और खुद बदलने को बदलना चाहते हैं-

जो समय को एक पोर्टल की तरह खोलते हैं, फिर तोड़  
देते हैं, और बाक़ी बचे वक़्त में संभोग, कविता, आचरण  
तृष्णा, वाणी, चुप्पी का कामचलाऊ इतिज़ाम करते  
हैं और अवरोधों को ख़ारिज करते हैं<sup>2</sup>

1. 2. दोनों वाल्ट व्हिटमैन की कविता 'सांग ऑफ माई सेल्फ़' से संदर्भित।

और मैंने बेरुत व उसकी बहिना राजधानियों को उकसाया  
वे अपने बिस्तर से उछलीं और पिछली यादों के दरवाजे  
बंद कर दिये। मेरे 'ओड' में झूलती, झूमती-झामती  
वे करीब खिसक खिसक आईं।  
कुदाल फाटक के लिए, फूल रौशनदान के लिए

ख़ाक हो जाओ ओ अवरोधों के इतिहास!

मैंने कहा : मैंने बेरुत को उकसाया।

—“कार्रवाई की बात करो, लफ़्ज़ बेजान हो गया।” अगलों ने  
कहा।

लफ़्ज़ इसलिए बेजान हो गये कि तुम्हारी ज़बानों ने,  
नक़लचीपन के नाम पर, बोलने की आदत छोड़ दी। लफ़्ज़ ?  
तुम उसकी आग का पता पाना चाहते हो ? तो लिखो ! मैं  
कहता हूँ : लिखो ! नक़ल करो, मैं नहीं कहता, न ही यह कि  
उनकी ज़बान को अपनी लिखावट में उतारो।

लिखो !

समंदर से खाड़ी तक एक भी ज़बान मुझे नहीं सुनाई देती,  
एक भी लफ़्ज़ पढ़ने में नहीं आता। सिर्फ़ शोर सुनाई  
देता है। इसीलिए कोई भी मुझे आग फेंकता नज़र  
नहीं आता।

लफ़्ज़ सबसे हल्का होता है, तब भी उसमें सब कुछ है।  
कार्रवाई महज़ कार्रवाई है- तुर्ता, तात्कालिक, और  
लफ़्ज़ में सभी दिशाएँ रली-मिली। अज़ल से अबद तक।

लफ़्ज़-हाथ, हाथ-ख़्वाब :

ओ आग, मैं तुझे खोजता हूँ, ओ मेरी राजधानी !  
ओ कविता, मैं तुझे खोजता हूँ !

और मैं बेरुत को उकसाता हूँ। वह मुझमें है, मैं उसमें।  
रंग किरनों की तरह भटकते हैं और पूछते हैं : कौन पढ़ता  
है, कौन देखता है ?

---

1. अंग्रेज़ी कविता का एक छंद-रूप, अरबी कविता के 'क़सीदा' छंद-रूप जैसा।

खुदा ने हक़ बात कही, और माओ भी ग़लत नहीं था :  
“हथियार जंग में एक बहुत ज़रूरी चीज़ है, लेकिन  
फ़ैसलाकुन नहीं। फ़ैसलाकुन हथियार नहीं, आदमी  
है।” और आख़िरी फ़तह जैसी कोई चीज़ नहीं होती,  
न पूरी हार जैसी।

ये कहावतें और सूक्तियाँ, दूसरे अरबों की तरह, मैंने वाल  
स्ट्रीट पर दुहराई, जहाँ हर क्रिस्म की सोने की नदियाँ  
अपने मुहानों से आती हुई ठाठें मारती हैं। और  
उनमें मैंने अरब की नदियाँ देखीं, जो करोड़ों लाशों  
और ‘महान बुत’ के लिए दी गई क़ुर्बानियों से, चढ़ावों  
से उफ़न रही थीं। और उन क़ुर्बानियों के दरमियान,  
अपने मुहानों की तरफ़ लौटते वक़्त क्रिस्तर बिल्डिंग  
की जानिब लुढ़कते-बुदबुदाते जहाज़ी।

इस तरह जलाता हूँ मैं अपनी आग़!

एक तरह के मनहूस शोर-शराबे के बीच हम रहते हैं ताकि  
हमारे फेफड़े इतिहास की हवा से भर सकें।

हम क़ब्रिस्तानों जैसी मनहूसियत से घिरी आँखों से उभरते हैं  
ताकि अपनी बदहाली पर जीत हासिल कर सकें। हम अंधेरे  
से ऊबचूब सिर में सफ़र करते हैं  
ताकि उगते हुए सूरज की हिफ़ाज़त कर सकें।

## यह है मेरा नाम \*

1

हर एक अक्लमंदी को मिटाती हुई  
यह मेरी आग़ है  
कोई निशान बाक़ी नहीं बचा  
ख़ून ही मेरा निशान है,  
यह मेरी शुरुआत है

मैं तुम्हारे बाड़े में दाख़िल हुआ  
धरती मेरे चक्कर लगाती हुई

---

\* 'यह है मेरा नाम' (हज़ा हो इस्मी) शीर्षक काव्य संग्रह से

तुम्हारे जिस्म के हिस्से एक नील बहाये ले जाती हुई  
हम बहे- हम बसे,  
तुमने मेरे खून को काटा  
और मेरी लहरों ने तुम्हारा सीना,  
हम टूट कर अलग हो गये।  
आओ शुरुआत करें:  
इश्क़ रात के उस्तरे की धार भूल गया,  
क्या मैं चीखूँ कि सैलाब आ रहा है?

आओ शुरुआत करें:  
एक चीख़ शहर की परतें उधेड़ती है  
और लोग चलते-फिरते आईना हैं

जब नमक काट चुकेगा हम मिलेंगे।  
यह तुम हो?

2

मेरा इश्क़ एक ज़ख़्म है  
मेरा जिस्म ज़ख़्म पर एक गुलाब  
तोड़ा नहीं जा सकता जिसे मौत से पहले।  
मेरा खून एक डाली है जो पत्तियों के बोझ से झुकी  
और फिर थम गई...

क्या पत्थर कोई जवाब है?  
क्या तुम्हारी मौत, नींद की वो मल्का  
तुम्हारी दिलजोई करती है?  
मेरे पहलू में तुम्हारे स्तनों के लिए  
लालसा के हाले हैं  
तुम्हारे कमसिन चेहरे के लिए  
एक ऐसे चेहरे के लिए... जैसे कि तुम!

मैं तुम्हें तलाश नहीं कर पाया  
ये मेरी लौ है जो मिटाती है

मैं तुम्हारे बाड़े में दाखिल हुआ  
मेरे दुखों के नीचे एक शहर है  
वो है



जो हरी टहनियों को साँपों में तब्दील करता है  
सूरज को एक सियाह आशिक में,

है मेरे पास...

3

क़रीब आओ, ओ धरती के बदनसीबो,  
ढको चीथड़ों और आँसुओं का यह दौर-  
ढको इसे गरमाहट तलाशते अपने जिस्म से...

शहर गुस्से की टूटी-बिखरी गोलाइयाँ हैं  
मुझे यक़ीन था कि इंक़लाब ने अपने बच्चे पैदा किये  
मैंने लाखों-लाख तराने दफ़्न किये और आन पहुँचा  
(तुम क्या मेरी क़ब्र में हो?)  
आओ, कि मैं तुम्हारे हाथ छू सकूँ  
गहो मेरी राह!

मेरा वक़्त नहीं आया, मगर दुनिया का क़ब्रिस्तान आ गया  
मेरे पास सभी सुल्तानों के लिए ख़ाक है  
दो मुझे अपना हाथ!  
गहो मेरी राह!...

मैं बदल सकता हूँ तहज़ीब की ज़मीनी सुरंग :  
ये मेरा नाम है

(एक निशान)

4

मैंने कहा अब मैं खुद को हमबिस्तरी के हवाले करता हूँ  
और आग दुनिया की फ़तह के।  
जम जाओ, नीरो, मैंने कहा, धँस जाओ नेज़े की तरह  
काइनात की भीह में!

रोम हरेक घर है, नीरो, रोम फंतासी है और हक़ीक़त,  
रोम खुदा का शहर है और तारीख़।  
नीरो, मैंने कहा, धँस जाओ नेज़े की तरह! नीरो...

ब्यालू में बालू के सिवा मैंने कुछ नहीं खाया  
मेरी भूख धरती की तरह घूम रही है  
पत्थर, महलों, मंदिरों को मैं अर्थात्ता हूँ बतौर रोटी

अपने तिसरैत खून में मैंने एक मुसाफ़िर की आँखें देखीं  
लोगों को अपने बेपनाह ख्वाबों की लहरों से यकदिल करते,  
वहशी खून में, पयम्बरी इल्म में दूरियों की मशाल थामे।

5

...और अली<sup>1</sup>, उसे उन्होंने कुएँ में फेंक कर  
पुआल से ढक दिया  
जबकि धूप ने अपने मृतक को उठाया और चलती बनी।  
क्या अली की सरज़मी पर रोशनी अपना रास्ता जानती है?  
मुठभेड़ करती है हमसे?  
हमने खून को सुना  
रोने को देखा

हम सच को सामने लायेंगे :  
ये वो मुल्क है  
जिसने अपनी जाँघें  
परचम की तरह उँचाई...

हम सच को सामने लायेंगे :  
यह कोई मुल्क नहीं है  
यह हमारा पागलखाना है  
सुल्लानों का राजदंड है  
पैगम्बर का मुसल्ला है...

6

हम साफ़-साफ़ बोलेंगे :  
मौजूदा दौर में कुछ चीज़ों को मौजूदगी कहा जाता है,  
कुछ को नामौजूदगी।

हमें हक़ बात कहने दो :  
हम नामौजूदगी हैं  
हमें आसमान ने नहीं पैदा किया  
हमें खाक-धूल ने नहीं पैदा किया

---

1 हज़रत मुहम्मद के दामाद और चौथे ख़लीफ़ा

हम अल्फ़ाज़ के दरिया में से उठता हुआ झाग हैं  
आसमान और उसकी जन्नत में लगी हुई ज़ंग  
ज़िन्दगी में लगी हुई ज़ंग!  
(एक ख़ुफ़िया ख़बर :)

मेरा वतन मुझमें पनाह पाता है  
मेरे चेहरे को किसी परछाई की तरह ढलने दो!

7

हम ज़माने को साथ लेकर चले  
गिट्टियों को सितारों के साथ यक़्मेल करते हुए  
बादलों को घोटों के झुण्ड की तरह बाड़ में बंद करते हुए

मुझमें चीज़ों को बदलने की क़ूवत है :  
तहज़ीब की सुरंग-  
ये है मेरा नाम!

वतन ने रबाब और मिहराब के शहद में  
सुकून हासिल किया  
बनाने वाले ने किसी खाई की तरह उसकी क़िलेबंदी की  
और बाड़ें खड़ी कर दीं

कोई नहीं जानता दरवाज़ा कहाँ है  
कोई नहीं पूछता दरवाज़ा कहाँ है  
(एक ख़ुफ़िया ख़बर)

8

...और अली ? उसे उन्होंने कुएँ में फेंक दिया। शोले  
उसके लिए पोशाक थे। हम धधक उठे- हम उसकी  
मिट्टी से लिपट गये। मैं धधक उठा : शब व ख़ैर,  
ओ गुल-ए- ख़ाक ! अली एक वतन है, जिसके नाम का  
कोई हिज्जे नहीं है। इन्कार को निचोड़ता हुआ पानी  
और घास को तस्लीम करता हुआ अली एक मुहाज़िर है।

कहाँ सोता है उदासी का वो उस्ताद ? कैसे बोता है वो  
अपनी आँखें ? मेरा आसमान भिंचा हुआ, मेरा काँधा  
लटका हुआ

और ज़मीन एक टोप है लोहे का- बालू और पुआल भरा

काँपता हुआ सरपट दौड़ता हूँ, ढक लेती है एक अबाबील  
उठता हूँ- उसका सीना, जैसे कोई लपट  
उठता हूँ, एक खिड़की खोलता हूँ : सब्ज खेल... मैं  
दूसरा विजेता हूँ, और ज़मीन एक खेल-बादलों में  
दाख़िल होती एक घोड़ी

रहमदिल दरख़्त साथ छोड़ रहे हैं। एक शाख़ मुझे  
झकझोरती है। पानी बाँध तोड़ कर फट पड़ता है।  
गुज़िश्ता आदमी का दौर ख़त्म हो गया

मैं शुरुआत करता हूँ। मेरा चेहरा परिक्रमा-पथ है-  
परिक्रमा रोशनी की।

9

... और औरतें निजी कमरों में आराम फ़रमाती हैं  
पाक किताबों का पारायण करते हुए  
और आसमान को गुड़िया या सिर को धड़ से जुदा  
करने वाली मशीन में तब्दील करते हुए।  
अली उघाड़ता है खुद को ग़रीबी के मसख़रों के आगे  
जो उक्राबों जैसी उड़ान भरते हैं  
टूटे हुए बिखरे हुए...

अली एक लपट है  
एक जादूगर, हरेक पानी में लपटें उठाता हुआ  
उजाड़ता हुआ किसी तूफ़ान की तरह-  
न धूल को बख़्शता हुआ न किताब को  
बुहारता हुआ इतिहास के वर्कों को  
ढकता हुआ दिन की रोशनी को अपने डैनों से  
ख़ुशी से लबरेज़, कि दिन दीवानावार है।

10

ये मौत का दौर है  
और हर मौत किसी अरब की मौत,  
ढेर होते हुए दिन उसके आँगन में  
देवदार के खोखले तने की तरह

ये एक परिंदे का विदागीत है  
किसी शोलावार सहरा में

11

इस तरह मैंने एक खेमे को प्यार किया  
उसकी बरौनियों में बालू रचाई,  
बारिश में भीगे दरख्तों ने सहरा को बादलों में बदल दिया।  
मैंने कहा, मिट्टी का यह टूटा घड़ा एक हारा हुआ मुल्क है  
ये जगह एक सुअरबाड़ा  
ये आँखें : गड़ढे  
मैंने कहा : दीवानगी दरख्त में पोशीदा एक लोक है।

मेरे मुल्क के नाक-नक्श में नज़र आयेगा मुझे काले कौए का चेहरा  
और इस किताब को नाम दिया जायेगा कफ़न।

12

इस शहर को कहूँगा मैं लाश  
और सीरिया के दरख्तों को गुमजदा परिंदे  
(इस नामदिहानी से शायद कोई फूल या कोई नग्मा पैदा हो!)  
और सहरा के चाँद को मैं कहूँगा ताड़ का दरख्त,  
शायद ज़मीन की नींद टूटे, और फिर  
कोई बच्चा या बच्चे का ख़्वाब बन जाये

कुछ भी नहीं बचा गाने के लिए मेरी लय को :  
ग़ैर मजहबी आयेँगे, और  
रोशनी अपने तयशुदा वक़्त पर आयेगी...

बची है बस दीवानगी।

13

तुम्हारी धुंध में मेरी तवारीख़ के लिए, ओ भट्ठी की राख,  
क्या कोई बच्चा है?  
दहकते शोले इंकलाब का गुस्सा हैं  
और मेरे नग्मे एक औरत :  
तुम्हारी धुंध में मेरी तवारीख़ के लिए क्या कोई बच्चा है?

हड्डियों में है विरासत की ख़ाक

वहाँ पनाह लूँगा मैं ?  
खाक देगी पनाह ?

कोई जगह नहीं, और मौत बेमानी  
या उस किसी शख्स की घुमेर  
जिसे अपने चेहरे पर  
ज़मानों की लाश नज़र आती है  
और वो लड़खड़ा कर ढेर हो जाता है  
वह कोई, जिसे लगता है कि  
बुढ़ापा बच्चों के लिए चूचक है।

मुझमें तब्दील करने की क़ूवत है- तहज़ीव की सुरंग-  
यह है मेरा नाम !

14

इस तरह मैंने एक खेमे को प्यार किया  
उसकी बरौनियों में बालू रचाई  
बारिश में भीगे दरख़्तों ने सहरा को बादल बना दिया  
खुदा को मैंने अली के मुल्क में  
एक भिखमंगे की शक़ल में देखा  
अली के मुल्क में मैंने धूप खाई  
रोटी में पकाई मीनारें  
और समंदर को देखा ढेर-ढेर धुंध में फहराते हुए,  
बेचैन फुसफुसाहट :

जिस किसी ने हमें शक्लो सूरत दी, उसका शक्लो-  
सूरत देना किसी छतदार पनाहगाह से बढ़कर  
नहीं था। उसकी बुनियाद बवंडरों से हिली और  
ढेर हो गई, फिर से हो गई ख़लीफ़ा के घर की  
जलावन।

समंदर कम ही मुँह खोलता है, अगर  
उसने कहा, हम बेआब हो गये हैं  
तवारीख़ बेआब हो गई हवाचक्कियों में अपने खुद के  
दोहराव से

बनाने वाला टूकटूक हो गया अपने ताबूत में  
कायनात टूकटूक हो गई अपने ताबूत में।

## अल किताब \*

### क्रीमियाई फूल

मुझे खाक धूल बगीचों के सफ़र पर जाना होगा  
सिपुर्दे-खाक दरख़्तों के बीच,  
वहाँ मस्नूई किससे होंगे, हीरे होंगे, सुनहरी ऊन होगी।  
मुझे उजाड़ और गुलाबबाड़ी के बीच से होकर  
खेतीबाड़ी के सफ़र पर जाना होगा।  
मुझे सफ़र पर जाना होगा—  
यतीम होंठों की मेहराब के नीचे पीठ टिकानी होगी,  
क्योंकि यतीम होंठों के ही भीतर  
उन होंठों की ज़ख़्मी छाँव में ही पुराने ज़माने के  
क्रीमियाई फूल खिलते हैं।

### किसी भी शख़्स के लिए ख़्वाब

मैं उस औरत के चेहरे में ज़िंदा हूँ जिसने  
एक लहर को अपनी ज़िंदगी मान लिया है  
एक ऐसी ठाँठें मारती लहर को, जो साहिल को गुमशुदा पाये  
सीपियों में गुम गये किसी बंदरगाह की तरह

मैं उस औरत के चेहरे में ज़िंदा हूँ जो मुझे  
इसलिए गवाँए दे रही है  
ताकि मेरे उछलें भरते और डाँड चलाते लहू में  
रौशनी घर बनाकर ठहर सके।

### भूख

भूखे आदमी ने एक जंगल उगाया  
जहाँ दरख़्त रुलाई में तब्दील हो गये  
और शाखें... बच्चे जनती एक देहात में,

---

\*. 'अल किताब' संग्रह से कविताएँ ली गई हैं।

गुंछों के मानिंद उगी अजन्मे बच्चों की फ़सल  
इस ब्रह्मांड की बाड़ी से  
और वह जंगल राख में तब्दील हो गया...

उनकी चीखों के साथ,  
जो ऐसे सुनाई पड़ीं, मानो क्रयामत की मीनारों से आ रही हों,  
उनमें रिरियाती सी आवाज़ें थीं भूख से झुलसी  
क्रातिल-क्रातिल-क्रातिल की रट लगाती।

## तेवर

मैंने आग का बर्फ़ से घालमेल कर दिया है  
मेरे जंगलात को न लपटें समझ पायेंगे न ही बर्फ़  
मैं अजनबी और घनिष्ठ बना रहूँगा साथ-साथ...

## बेरौशन चिमनियाँ

किसी सनक में नहीं कहा उसने  
कि आसमान एक औरत है,  
वह दरअस्ल धरती का सपना देख रहा था-  
अपने सपने उसकी बेरौशन चिमनियों में उँडेलते हुए।

## सितारा

सितारा रोता हुआ-  
सितारे के आँसू  
याने एक रात।

## चहलकदमी

एक सितारा ख़फ़तान पहने  
खजूर के दरख़्तों के बीच  
चहलकदमी कर रहा है...



## गुलाब

एक गुलाब,  
उसका घर है उसकी अपनी खुशबू  
और आहिस्ता-आहिस्ता बहती हवा  
उसका बिस्तर

## सूरज

सूरज मेरी रात के लिए  
एक और जिस्म ही तो है!

## ज़िद

एक ज़बान, जिसे उसने सिरजा  
उससे दूर छिटक रही है  
और एक रौशनी, जो उसके भीतर से फूटी  
उसके खिलाफ़ बगावत का परचम उठा रही है

## लय

धरती ने एक बार छंद से कहा  
मुझे अपनी लय देकर कृतार्थ करो  
ताकि मैं रच सकूँ कविता,  
छंद अपने निराशालोक में छटपटा रहा था  
उससे मुक्त होने  
और अपने गुमशुदा सूर्य को खोज निकालने के लिए।

## कवि

दुनिया बदरंग होती जाती है  
और वह शब्दरूपी औरतों को पढ़ता है  
मृत्यु की भाँति, वह उन्हें बहकाता है;  
जिस किसी का उसने काम तमाम किया  
उसे नया जीवन दिया,  
इतिहास के पर्दे का बनाया उसने एक और बिस्तर  
और उसी में वह पैदा हुआ।

## अदूनीस

कहता है वह :  
यह झाड़ी अपनी आदत के चलते  
अब भी अपने उरूज पर है,  
उसकी तरफ जाने वाली राहें एक किताब हैं,  
जबकि मैदान है परछाई

## राइनर मारिया रिल्के<sup>1</sup>

सूरज के सम्मुख अपनी पराजय मान लेने  
और गुलाब के कुम्हला जाने के बाद  
हवा को वसीयत में मिली सुनहली धूल,  
उसकी राख के बारे में धरती का कहना है :  
यह मेरा ज्ञान है  
वापस ले आया गया मुझ तक।

## बॉदलेयर<sup>2</sup>

कविता विलास मय मेरे अपने ही भीतर  
मेरी आँखों की पुतलियों के बीच,  
कविता  
एक देह  
मेरे बिस्तर पर  
धरती जैसी पराई  
धरती जैसी घनिष्ठ,  
देह-भावना तो रोशनी की पोशाक है।

## कविता का आरम्भ

कितनी भव्य हो उठती हो  
तुम जब क्षितिज को विचलित कर देती हो  
कुछ लोग यद्यपि तुम्हें आह्वान के रूप में  
और कुछ दूसरे प्रतिध्वनि के रूप में लेते हैं,

---

1. जर्मन कवि (1875-1926)

2. फ्रेंच कवि (1821-1866)

कितनी भव्य हो उठती हो तुम  
जब रौशनी के लिए- और अँधेरे के लिए  
साक्ष्य बनती हो!  
वाणी के अंत और आरम्भ का वास है तुममें,  
कुछ लोगों के लिए यद्यपि फेनिल संभावना भर हो तुम  
दूसरे तुम्हें आद्याशक्ति के रूप में पहचानते हैं-  
शब्द और निशब्द के मध्य एक मिलनस्थली के रूप में  
कितनी भव्य हो उठती हो तुम!

## कबीलाई सरदारों की दास्तान \*

1

जाफ़ा<sup>1</sup> का चेहरा एक बच्चा है  
कैसे फूल सकते हैं भला सूखे दरख़्त ?  
ज़मीन ने क्या किसी जोगन का चोला ले लिया है ?  
कौन है मशिक़ को झँझोड़ने वाला ?  
ख़ूबसूरत तूफ़ान तो आ गया, ख़ूबसूरत तबाही नहीं  
एक आवाज़ पकड़ में न आने वाली...

(एक सिर उभरा ऊँचाई पर, बच्चों की-सी तोतली  
आवाज़ में कहा उसने, चीखते हुए, 'मैं ख़लीफ़ा हूँ')  
भागे वे यहाँ वहाँ, और अली के चेहरे पर घात  
लगाकर हमले के सरंजाम जुटाये  
वो एक बच्चा, गोरा या काला  
उसके दरख़्त जाफ़ा, उसके नग्मे जाफ़ा...  
उन्होंने एक साथ दबाया और दो टुकड़ों में तक़सीम कर दिया  
अली का चेहरा

प्यालों में है शहादत का खून। कहिए: सामूहिक क़ब्रें,  
मत कहिए : गुलाब थी मेरी शा'इरी, खून-खून हो गई।

\* कबीलाई सरदारों की दास्तान (मुक़द्दमा लि-तारीख़ मुलूक अल-तवाइफ़) पुस्तक से। 'मुलूक अल-तवाइफ़' यह पारिभाषिक शब्द-पद स्पेन के अरबी दौर से संदर्भित है। वहाँ की लोकतंत्रवादी उमैयद ख़िलाफ़त के विरुद्ध छोटे-छोटे कबीलाई सरदारों ने साज़िश करके अपनी छोटी-छोटी रियासतें कायम कर ली थीं। उन्हीं छोटे कबीलाई सरदारों को मुलूक अल-तवाइफ़ कहा गया। अनु.

1. तेल अवीव का दक्खिनी हिस्सा, जो 1950 तक पश्चिमी इज़रायल का एक शहर था।

2

खून और गुलाब के दरमियान धूप के एक धागे के सिवा कुछ भी नहीं।  
कहिए, मेरी खाक एक पनाहगाह है।  
इब्न अब्बाद <sup>1</sup> एक से दूसरे सिर के दरमियान  
पैनाता है अपना खंजर  
और इब्न जव्हार <sup>2</sup> एक लाश में तब्दील हो जाता है।

शुरू में कुछ नहीं था आँसुओं की जड़ के सिवा  
याने मेरा वतन  
और उसका फैलाव मेरा धागा—  
मैं चिथड़ा-चिथड़ा कर दिया गया  
और अरब के सब्जे में मेरा सूरज डूब गया।

तहजीब ज़ख़्म-ज़ख़्म लोगों के लिए एक सवारी है  
और शहर एक काफ़िर गुलाब,  
एक तम्बू,  
इस तरह एक दास्तान शुरू होती है, या  
इस तरह एक दास्तान ख़त्म होती है।

3

खुला मैदान मेरा धागा था—  
मैं राख से ढका ज्वालामुखी का मुँह,  
मैंने शहर को फिर से जोड़ा, और  
शहर को मैंने लिखा

(शहर जब घसीटा जा रहा था और  
उसकी आहोज़ारी बेविलोनियाई दीवारें थीं)  
शहर को मैंने लिखा ठीक ककहरे के मानिंद—  
किसी ज़ख़्म को भरने को नहीं  
न ही ममी को फिर से जगाने को  
बल्कि नासाजियों के उभारने को,

---

1. स्पेन के सेविय्ये शहर का एक अरब न्यायाधीश, जिसने सन् 1024 में खुद को वहाँ का शासक घोषित कर दिया। इस पर अरब बज़ीर इब्न जव्हार से उसकी मुठभेड़ हुई।

2. स्पेन का एक अरब बज़ीर, जिसे सन् 1031 में कादौबा के लोगों ने शाही हुक्मत उखाड़ कर वहाँ का गवर्नर नियुक्त किया। उसने वहाँ जम्हूरी और अमन चैन वाली हुक्मत कायम की। उसके वक्त्र में स्पानी उमैय्यद फ़िलाफ़त के विरुद्ध छोटे-छोटे सरदारों के षड्यंत्र जारी रहे।

खून गुलाबों और कौओं को एक कहता है-  
पुलों को टुकड़े-टुकड़े करने को  
गमजदा चेहरों को नहलाने को  
जमाने से बहते आ रहे खून में ।

4

और मैंने लिखा शहर को  
जैसे कोई पैगम्बर मौत से मुखातिब होता है  
याने कि मेरा वतन

मेरा वतन है वो आहंग  
वो आहंग, वो आहंग...

बर्बाद हो जा  
बर्बाद हो जा !

5

ओ खून, जमते हुए, बहते हुए तकरीर के रेगिस्तान के मानिंद  
ओ खून, मुसीबत या अँधेरा बुनते हुए  
बर्बाद हो जा- बर्बाद हो जा...

तेरी तारीख का जादू टूट चुका  
दफ़ना दे उसका पपड़ाया चेहरा और बाँझ विरासत  
माफ कर दो और छोड़ दो  
ओ चिंकारा के सींगो... !  
ओ जंगली हिरन से सींगो... !

6

मैं भौंचक हूँ, ऐ मेरे वतन,  
हर बार मुझे तुम एक मुख़्तलिफ़ शक्ल में नज़र आते हो ।  
अब मैं तुम्हें अपनी पेशानी पर ढो रहा हूँ  
अपने खून और अपनी मौत के दरमियान :  
तुम क़ब्रिस्तान हो या गुलाब ?

बच्चों जैसे नज़र आते हो तुम मुझे

अपनी अँतड़ियाँ घसीटते, अपनी ही हथकड़ियों में उठते-गिरते,  
चाबुक की हर सटकार पर एक मुख्तलिफ़ चमड़ी पहनते..  
एक क़ब्रिस्तान या एक गुलाब ?

तुमने मेरा क़त्ल किया, मेरे नग़्मों का क़त्ल किया  
तुम क़त्लेआम हो...  
या इंक़लाब ?

मैं भौंचक हूँ, ऐ मेरे वतन,  
हर बार तुम मुझे एक मुख्तलिफ़ शक्ल में नज़र आते हो।

7

देखो, तुम ख़त्म हो गये मगर स्वाँग ख़त्म नहीं हुआ  
तुम मरे जैसे और सब मरे  
जैसे हमारे पुरखों के फेफड़ों में सुबकता हुआ वक़्त  
जैसे हमारे रंगारंग दरवाज़े तोड़ते बादल  
जैसे बालू में सोखता हुआ पानी  
जैसे अमरता तोड़ती हुई चण्डूल की गर्दन

औरों की ही तरह थे तुम  
तुम ख़त्म हो गये मगर स्वाँग ख़त्म नहीं हुआ  
औरों की ही तरह थे तुम;  
-ख़ारिज करो औरों को !

8

उन्होंने वहाँ से शुरुआत की, तुम यहाँ से करो  
एक बच्चे के इर्द-गिर्द, जो दम तोड़ रहा है  
एक ढहा दिय गये मकान के इर्द-गिर्द :  
क़ब्ज़ाये और दूसरे मकानों द्वारा हड़प लिये गये

यहाँ से करो शुरुआत  
गली-कूचों की आहो-कराह से  
उनकी घुटन से  
उस मुल्क से, जिसका नाम एक क़ब्रिस्तान में तब्दील हो गया

यहाँ से करो शुरुआत  
जैसे कोई क्रहर बरपा होता है  
या जैसे बिजली गिरती है...

9

तुम मर गये ?  
देखो, कैसे बिजली की कोख से फूटी सड़क के मानिंद हो गये तुम !  
देखो, कैसे पिघले और पिघल कर नयी शक्ति पा गये तुम !

तुम मर गये, मगर कड़क नहीं मरी

पता है तुम्हारी जायदाद एक तम्बू की छाँव थी महज़ !  
उसमें चीथड़े थे, कभी-कभार पानी, कभी-कभार एक रोटी  
और तुम्हारी औलादों ने गंदे जोहड़ों में परवरिश पाई !

10

तुमने उम्मीद का दामन नहीं छोड़ा, बगावत की, और  
हो गये ख़्वाब, हो गये आँखें  
दरियाएँ - युर्दान के किनारे किसी झोपड़ी में नुमायाँ  
या गाज़ा में, येरूशेलम में :  
वक्ते जनाज़ा कूचे में तूफ़ान वरपा करते हुए, और  
उसे शादी के ज़ंशन की तरह छोड़कर आगे बढ़ जाते हुए

चारों तरफ़ गूँजती तुम्हारी आवाज़, जैसे कोई समंदर  
फौवारे की मानिंद फूटता तुम्हारा खून, जैसे कोई पर्वत ।

और ज़मीन जब तुम्हें अपने बिस्तर पर ले जाती है  
छोड़ देते हो तुम उसे आशिक़ के लिए  
और दो बार बहे अपने खून की दो धाराएँ  
फ़तहमंद के लिए ।

11

आज़ादी का परवाना शोलों में नक्श करता है अपना नाम  
और साँस के जमे हुए सूराख़ों में मर जाता है

येरूशेलम नक्श करता है अपना नाम :

हुकूमत अब भी बजूद में है  
अब भी बजूद में है हुकूमत।

वैसे ही; हलाक़ दरिया रबाँ है :  
सारा पानी जाफ़ा का चेहरा है  
हरेक ज़ख़्म जाफ़ा का चेहरा है।

12

और 'कभी नहीं' की करोड़ों चीखें जाफ़ा का चेहरा हैं  
और बारजे पर, हथकड़ियाँ पहने,  
क़ब्रों में सोये हुए माशूक़ जाफ़ा हैं  
और दुनिया की कमर का फ़िज़ूल गया पानी जाफ़ा है

क़ैस कहो मुझे, लैला कहो इस ज़मीन को  
जाफ़ा के नाम पर  
इंसानियत के जरिये बेसरोसामाँ, बेदरोदीवार की गई  
इस अवाम के नाम पर  
बम कहो मुझे, या संगीन...

...ख़ाक़ और गुलाब के दरमियान का  
वो दौर आ रहा है  
जब सब कुछ ख़त्म हो जाएगा  
जब सब कुछ शुरू होगा...

---

सुरेश सलिल, E-14, सादतपुर,  
(गली न.-5) दिल्ली-110094  
मो.- 7042481980





मनोज कुमार पाण्डेय

## मदीना

गाँव में मेरा घर गाँव से थोड़ा परे हटकर था। पूरा गाँव जहाँ हरियाली और रास्ता था वहीं मेरे घर के आसपास की ज़मीन जैसे बंजर। बारिश के कुछ महीनों को छोड़ दें तो दुआर पर साल भर रेह फूलती रहती। कच्चे घर की दीवारें हमेशा लोना छोड़ती रहतीं। हमें घर की फ़र्श और दीवारों को दुरुस्त करने के लिए दूर से मिट्टी ढो कर लानी पड़ती। वह सफ़ेद मिट्टी तो और दूर से आती जिससे घर की दीवारें और चूल्हे पोते जाते।

घर पर पेड़-पौधों के नाम पर बस थोड़े से पेड़ थे। घर के सामने थोड़ी दूर पर नीम का एक पुराना पेड़ था। हालाँकि यह भी गाँव के अपने हमउम्र पेड़ों जितना घना नहीं था फिर भी उसका होना हमारे लिए बहुत बड़ी बात थी। उसके अलावा घर के पूरब की तरफ़ बबूल और विलायती बबूल के कई पेड़ थे जिनकी छाँव कई बार हमारे उठने-बैठने के और इससे भी ज़्यादा जानवरों के काम आती। हम उन्हीं बबूलों के नीचे जानवर बाँधते। एक सहूलियत यह भी कि खूँटे नहीं गाड़ने पड़ते। उनकी जगह बबूल के पेड़ ही काम में आ जाते। वहीं टूटी-फूटी ईंटों और मिट्टी के जोड़-तोड़ से एक चरही बना दी गई थी जिसमें जानवरों को चारा डाला जाता।

मेरे घर पर एक भी ऐसा पेड़ नहीं था जिसमें फल लगता और हम खाते। मैं आम, जामुन या बेर आदि की तलाश में दूसरों के पेड़ों के नीचे भटकता और झिड़कियाँ खाता। कई बार तो वे लोग ओरहन लेकर घर तक चले आते और मुझे घर पर डाँट और मार पड़ती। फल ही नहीं, फूल वाले पौधे भी घर पर न के बराबर थे। कुएँ की बगल की

एक जगह पर हर साल देशी गेंदे के कुछ पौधे उगते और बड़े होते। उनमें फूल खिलते फिर वे सूख जाते। इसके सिवा हमारे यहाँ कोई दूसरा फूल भी नहीं था। बाबा या बाबू रोज़ सुबह कहीं और से फूल तोड़ कर ले आते। हालाँकि इसके लिए भी उन्हें कई बार उसी तरह से भुनभुनाहट का सामना करना पड़ता जिस तरह से हमें आम और जामुन के लिए।

शायद यही अभाव रहा होगा जिसने मेरे मन में यह घनघोर लालसा भरी होगी कि हमारे यहाँ भी ख़ूब सारे फल और फूल वाले पेड़ हों। बल्कि उतने हों जितने कि गाँव में किसी के यहाँ न हों। यह सोचना आसान था पर इसे संभव कर पाना बहुत मुश्किल। मैं आमों और जामुनों के बीज ले आता और उन्हें जहाँ तहाँ बो देता। कई बार उनमें से पौधे भी निकलते। उनकी रंगीन आभा मेरा मन मोह लेती। मैं दिन में कई कई बार उन्हें देखने जाता। उन्हें बढ़ता देखता और गहराई तक एक सम्मोहन से भर जाता। उन्हें लेकर मन में बहुत सारे सपने देखने लगता। सपनों में जब वे कद्दावर पेड़ों में बदल रहे होते यथार्थ में उनकी पत्तियाँ अपनी चमक खोने लगतीं और वे धीरे धीरे सूख जाते। मेरे घर की मिट्टी में पता नहीं ऐसा क्या था जो उन्हें मार डालता। मैं कई बार उस मिट्टी को चखता कि कहीं उनमें कोई ज़हर तो नहीं है। मेरे मुँह का स्वाद नमकीन हो जाता पर मेरा कुछ नहीं बिगड़ता।

इसके बावजूद मैंने कोशिशें नहीं छोड़ीं हालाँकि नतीजा शून्य ही रहा। फिर मैंने हाई स्कूल के लिए घर से लगभग तीन कोस दूर एक क़स्बे के स्कूल में दाखिला लिया। स्कूल इसलिए भी मेरे सपनों के नजदीक लगा कि उसमें इतनी तरह के फूलों के पौधे और पेड़ थे जितने मैंने एक साथ पहले कभी नहीं देखे थे। ज़्यादातर के तो मैं नाम भी नहीं जानता था। मैं अपने स्कूल में बहुत खुश था पर उस दिन मेरी खुशी और बढ़ गई जब मैंने स्कूल के नजदीक ही एक पेड़-पौधों की नर्सरी ढूँढ़ निकाली। मेरे सपनों को जैसे पंख ही लग गए फिर।

जल्दी ही मैंने स्कूल के माली से जान-पहचान बढ़ानी शुरू कर दी। मुझे उससे वह गुर सीखना था जिससे पौधे सूखें नहीं और वैसे ही बढ़ते जाएँ जैसे मेरे स्कूल में बढ़ रहे थे। माली ने पहले तो मुझमें रुचि नहीं दिखाई फिर मेरी तमाम कोशिशों और पीछे पड़े रहने के बाद एक दिन उसने

मुझसे स्कूल के पीछे चलने के लिए कहा। मैं खुश हो गया। माली मुझे स्कूल के पीछे वाली नहर में ले गया और उसने मुझमें ऐसी रुचि दिखाई कि मैं उठ के खड़े होने के काबिल भी नहीं बचा। न जाने किस तरह से साइकिल चलाकर मैं घर पहुँचा। अगले कई दिनों तक मुझे बुखार आता रहा और टट्टी जाने के नाम से भी मेरी रूह काँपती रही। पर मुझमें न जाने कैसा डर या शर्म थी कि यह बात मैं किसी को भी नहीं बता पाया।

जब मैं दोबारा स्कूल पहुँचा तो एक अजीब तरह के भय से भरा हुआ था। अब वहाँ स्थिति उलट गई थी। पहले मैं माली के पीछे घूमता था अब माली मुझे ढूँढ़ रहा था। उसने मुझे लालच दिया कि अगर मैं उसका कहा मानता रहूँ तो वह भी मुझे पेड़ पौधों के बारे में बहुत सारी बातें बताएगा। यही नहीं वह स्कूल में लगने के लिए आने वाले पौधों में से बहुत सारे पौधे मुझे देगा। यह प्रलोभन मेरे लिए बहुत तगड़ा था पर उसके साथ का अनुभव उससे भी ज़्यादा भयावह। मैंने मना कर दिया। फिर भी वह बहुत दिनों तक मेरे पीछे पड़ा रहा। आखिर में कई दिनों की कोशिश और अभ्यास के बाद एक दिन मैंने माली को गाली बकी और कहा कि मैं उसकी शिकायत प्रिंसिपल से करूँगा। माली हँसा और बोला तो प्रिंसिपल तुम जैसे चिकने को छोड़ देंगे क्या? वह मुझसे भी ज़्यादा शौकीन हैं। मेरी अभ्यास से जुटाई हुई हिम्मत न जाने कहाँ ग़ायब हो गई। मैं रोने लगा।

यह एक संयोग था कि मेरी ही क्लास का एक लड़का उधर आ निकला। उसने मुझसे रोने की वजह पूछी। उसके पूछने में न जाने ऐसा क्या था कि मैं भरभरा गया और जो बात मैंने अब तक किसी को नहीं बताई थी वह उसे बता डाली। फिर तो उसने माली का कालर पकड़कर उसे कई हाथ मारे और जो जो गालियाँ सुनाई कि मेरा जी ही खुश हो गया। उतनी गालियाँ मैंने पहले कभी एक साथ शायद ही सुनी हों। बाद में उसने बताया कि उसका बाप वहीं कस्बे के ही थाने में पुलिस है और वह अपने बाप की गालियाँ सुनकर रोज़ उनके बकने का अभ्यास करता है। बाद में भी उस दोस्त ने मुझे बहुत सारी मुश्किलों से बचाया।

माली से निराश होने के बाद अब नर्सरी ही थी जो मेरे सपनों में बसने वाले पेड़-पौधों को ज़मीन पर उतार

सकती थी। पर वहाँ मुफ्त का कुछ नहीं था। नर्सरी में जाने से पहले मुझे कुछ रुपये चाहिये थे जिनसे मैं पौधे खरीद सकता। दरअसल मैं एक एक पौधा खरीदने और लगाने के बारे में नहीं सोचता था। मेरा लालच बहुत बड़ा था। मैं एक साथ बहुत सारे पौधे खरीदना चाहता था। मैं सपने में देखता था कि वे बहुत सारे पौधे पेड़ बन गए हैं। वे तरह तरह के फूलों और फलों से लदे हुए हैं। उन पेड़ों के बीच बहुत सारे रंग-बिरंगे पंछियों के घोंसले हैं। उन पंछियों के बीच बहुत सारे तोते हैं। वे तोते आमों को जूठा कर देते हैं और वे जूठे आम बहुत मीठे होते हैं। कोयल हैं जो आमों पर पाद देती हैं और वे आम महकने लगते हैं।

यह सब सपनों की बातें थीं पर असल में भी इसके लिए मैं बहुत कुछ कर रहा था। एक दिन जब मेरे पास पचास रुपये हो गए तो मैंने नर्सरी में जाने की हिम्मत जुटाई। मैं बहुत देर तक नर्सरी में इधर उधर घूमता रहा। तरह तरह के पौधों के दाम पूछता रहा। पौधों को दिखाने वाला लड़का थोड़ी देर में मुझसे उकता गया। उसने कहा कुछ लेना हो तो तो नहीं तो आगे बढ़ो। मैंने बहुत सोच समझ कर खुद को फूलों के पौधों पर केंद्रित किया। मेरी सोच यह थी कि ऐसा करने से बाबा और बाबू खुश होंगे और आगे दूसरे पौधों के लिए रुपये माँगने और जुटाने में मुझे आसानी होगी। इस तरह से मैंने पचास रुपये में कुल पाँच पौधे खरीदे। लाल कनेर, गुड़हल, गुलाब और मदीना। मदीने के पेड़ मैंने अपने इस स्कूल में आने के पहले बस एक दो बार ही देखे थे और मोहित हुआ था। तब मैं इसका नाम नहीं जानता था। यह तो स्कूल में आकर पता चला कि यह पेड़ मदीना है और उस दिन नर्सरी में यह पता चला कि इसे गुलमोहर भी कहते हैं। नाम जो भी हो मेरे लिए मदीना एक हरे भरे, छतनार, लाल फूलों से लदे पेड़ का नाम था। इसका कोई और भी मतलब हो सकता था यह मुझे बाद में जानना था। इन पौधों के साथ एक अमरूद का पौधा खरीदने से मैं खुद को रोक नहीं पाया। आखिर सपने में कुछ फल भी तो थे जिन्हें तोतों द्वारा जूठा करके मीठा करना था।

पौधे खरीदने के बाद मैं देर तक नर्सरी के मालिक के साथ बतियाता रहा। यह मालिक एक बूढ़ा था जिससे जी भर के बातें की जा सकती थीं। वह खुद पेड़ पौधों के बारे में बहुत सारी बातें बताना चाहता था। मैंने उसे अपने घर की

बंजर मिट्टी के बारे में बताया। यह भी बताया कि कैसे पौधे उगते हैं फिर सूख जाते हैं। उसने सब धैर्य से सुना फिर मुझे मिट्टी को सुधारने की कई तरकीबें बताईं। मुझे गहरे गड्ढे खोदने थे। उनकी मिट्टी निकाल कर उनमें बढ़िया मिट्टी डालनी थी। बीच बीच में पुआल या पेड़ों की पत्तियाँ, गोबर की खाद की परत, फिर मिट्टी और फिर यही सब। यह सब बड़े पेड़ों के लिए तैयार होने वाले गड्ढों के लिए था जिन्हें यह सब करके बारिश भर के लिए छोड़ देना था। मैंने छोटे पेड़ों वाले पौधे खरीदे थे। उनका काम बाहर की मिट्टी और गोबर की खाद से चल जाना था। बाकी कुछ रसायनिक खादें भी थीं जो कि घर पर खेती आदि के लिए आती ही रहती थीं।

मैं बहुत उत्साहित होकर घर आया। घर आकर मेरा सारा उत्साह जाता रहा। मुझे बाबा की डाँट का सामना करना पड़ा और उन्हें यह सब बताना पड़ा कि मेरे पास पचास रुपये आए कहाँ से? उसके बाद ये पौधे कहाँ लगाए जाएँ इसके बारे में मेरी एक न चली। मैंने मन ही मन उन्हें कहीं और लगाने की सोच रखी थी और बाबा ने जो जगहें बताईं वह मुझे अच्छी नहीं लग रही थीं। पर अंततः मुझे ही झुकना था और मैंने बाबा द्वारा तय की गई जगहों पर ही गड्ढे तैयार करने शुरू कर दिए। इस बीच पौधे एक जगह छाया में रखे हुए थे जिन पर मैं बीच बीच में पानी छिड़कता रहता। आखिरकार चार दिन बाद एक साथ पाँचों पौधों को उनके हिस्से की ज़मीन सौंप दी गई।

मैं रोज़ सुबह शाम जब भी मौक़ा मिलता उन पौधों के पास जाता। उन्हें पानी देता। उनके पत्ते छूता, उन्हें सहलाता पर हफ्ते भर के भीतर अमरूद का पौधा सूख गया। इस तरह से फल का क्रिस्सा ख़त्म। अब सिर्फ़ फूल बचे थे और उन चारों में नई कोंपलें निकल रही थीं। मैं खुशी में मगन था कि अब वह दिन दूर नहीं कि जब मेरे लगाए हुए पौधों में फूल खिलेंगे। पौधे बढ़ते रहे। मुझे भरोसा नहीं हो रहा था कि पौधों ने जड़ पकड़ ली है और इस बंजर ज़मीन के साथ उनका एक जीवित रिश्ता बन रहा है। मेरे सपनों को पंख लग गए थे कि अगर यह चार यहाँ अपनी जड़ जमा सकते हैं तो अगले चालीस भी जमाएँगे। मैंने दादा से जगह के बारे में तय किया। कुछ जगहों पर अपने मन से गड्ढे खोदने शुरू किए। मुझे जब भी समय मिलता मैं उनमें दूर खेत से

बढ़िया मिट्टी लाकर डालता। बीच बीच में जलकुंभी, पुआल, पेड़ों की पत्तियाँ और गोबर की खाद डालना न भूलता। यह अगले साल की तैयारी थी। पौधे खरीदने के लिए रुपये इकट्ठे करने का काम अलग से चल ही रहा था। उसके लिए भी बहुत सारा प्रपंच रचना पड़ रहा था।

अचानक एक दिन मेरे सपने को फिर से झटका लगा। लाल कनेर और गुड़हल के पौधे कोई उखाड़ ले गया था। उनकी जगह खाली थी। मेरी आँखों में आँसू आ गए। जैसे ज़माने भर की निराशा मेरे भीतर आकर इकट्ठा हो गई थी। यह बात तो मैंने सोची ही नहीं थी कि पौधे चोरी भी हो सकते हैं, नहीं तो उनके चारों तरफ़ काँटीली बाड़ का इंतज़ाम तो कर ही सकता था। पर अब कुछ नहीं किया जा सकता था। इस घटना से सबक लेकर मैंने बाक़ी बचे पौधों की सुरक्षा के लिए बबूल की डालियों की बाड़ लगाने का निश्चय किया।

तभी मैंने गुलाब की एक नई नई कॉपल में एक नन्हीं सी कली देखी। मैं खुशी के मारे पाग़ल ही हो गया। मेरे अपने गुलाब में फूल खिलने वाला है यह खुशी इतनी नई और अनोखी थी कि मैं अमरूद का सूखना और गुड़हल और लाल कनेर का चोरी चले जाना जैसे भूल ही गया। मदीना भी तेज़ गति से बढ़ रहा था। तीन चार महीनों के भीतर वह मुझसे भी बड़ा हो गया था और उसमें सभी दिशाओं में नए नए कल्ले फूट रहे थे। पर गुलाब में एक कली दिख गई थी इसलिए मैं उसके प्रति एक तरह के पक्षपात से भर गया था। मैं उसके आसपास किसी घास का एक तिनका भी नहीं रहने देना चाहता था। तभी एक दिन किसी दोस्त ने उसमें रसायनिक खाद डालने की सलाह दी। मैंने गुलाब के पौधे के आसपास गुड़ाई की और उसमें अँजुरी भर यूरिया और अँजुरी भर डीएपी लाकर डाल दिया। अगले दिन सुबह पौधा मुरझाया हुआ था। उसकी नई कॉपले नीचे से काली पड़ गई थीं। मैंने खाद डालते हुए सोचा भी नहीं था कि ज़रूरत से ज़्यादा खाद मेरे गुलाब की जान भी ले सकती है। इस लहलहाते पौधे की हत्या की जिम्मेदार मेरी ही नासमझी थी। यह चीज़ मुझे लंबे समय तक सालती रहने वाली थी।

अब पाँच में से सिर्फ़ एक पौधा बचा था, मदीने का। इसके साथ मैं किसी भी तरह का ख़तरा उठाने को

तैयार नहीं था। मैं दिन में कई कई बार उसके पास जाता। उससे बातें करता। उससे इस बात का वादा लेता कि अपने बाकी साथियों की तरह वह मुझसे दगा नहीं करेगा। वह मेरा साथ देगा। वह मेरे हरे भरे सपनों की ज़मीन बनेगा और उसने मेरा पूरा साथ दिया। साल भर के भीतर ही वह एक किशोर छतनार पेड़ में बदल गया। बारिश आने के बाद जब साल भर की धूल मिट्टी साफ़ हुई और नई कॉपले प्रकट हुईं तो उनकी हरी आभा ने मेरा मन ही मोह लिया। पर असली जादू अभी बाक़ी था। उन कॉपलों की फुनगियों में ढेर सारी कलियाँ छुपी हुई थीं। मैंने सोचा ही नहीं था कि उसमें इतनी जल्दी फूल आएँगे। शायद इसलिए कलियों की तरफ़ मेरा ध्यान ही तब गया जब वह खिलने खिलने को हो आई। और एक दिन सुबह उसमें कई फूल एक साथ खिले हुए थे। मेरे बोए गए या लगाए गए पौधों में यह पहला था जिसने मेरी आँखों में सफलता की एक रंगीन चमक पैदा की थी।

मैं घर भर में सबको दिखाना चाहता था। पर मैंने जल्दी ही पाया कि मेरा उत्साह किसी पर कोई ख़ास असर नहीं डाल रहा है। बाबा ज़रूर पेड़ तक गए। उन्होंने उसका एक फूल तोड़ा और सूँघ फिर फेंक दिया। बोले इसमें तो कोई महक ही नहीं है बल्कि एक अजीब सी जंगली बू है। मैंने उनके फेंके हुए फूल को उठाया और सूँघा। सचमुच उसमें एक भीनी सी जंगली बू थी पर यह बू मुझे सबसे अलग और ख़ास लगी। मुझे लगा कि यह मेरे सपनों की महक है। एकदम सबसे अलग, सुंदर और जंगली। वह अपने साथ मेरे भी होने का एहसास लेकर आया था। यह जो एक नन्हें से पौधे से खूबसूरत घने पेड़ में बदल रहा है और जिस पर लाल रंग के फूलों के गुच्छे खिले हुए हैं उसे मैंने लगाया है। वह मेरी मेहनत और देखरेख में बड़ा हुआ है। वह मेरा है।

उसकी आभा दिन पर दिन बढ़ती ही जाती थी और उसी के साथ साथ और पौधे लगाने का मेरा उत्साह भी। मैंने इस बार पौधे लगाने के लिए गिनकर पूरे पचास गड्ढे तैयार किए थे। पर एक साथ पचास पौधे ले आना मेरी क्षमता के बाहर की बात थी। इसलिए मैंने तय किया कि मैं पाँच पौधे रोज़ ले आऊँगा और इस तरह से अगले दस बारह दिनों में पूरे पौधे आ जाएँगे। इससे यह भी फायदा होगा कि पौधों को

घर लाकर रखना नहीं पड़ेगा और वे रोज़ के रोज़ लगा दिए जाएँगे। जिस दिन पौधों की पहली खेप घर लाया, मैं नए उत्साह से भरा हुआ था। मेरे पास पाँच पौधे थे उन्हें लेकर मैं मदीने के पास पहुँचा। मुझे उन पौधों को उनके बड़े भाई से मिलाना था जो उसी नर्सरी से साल भर पहले आया था और लहलहा रहा था।

वहाँ पहुँचकर मैं जैसे जड़ हो गया। मदीना कटा हुआ पड़ा था। उसकी आभा ख़त्म हो गई थी। उसकी बड़ी बड़ी पत्तियाँ, कलियाँ और फूल सब मिट्टी में पड़े हुए थे। मेरी समझ में ही नहीं आया कि मैं क्या करूँ अब। पौधे मेरे हाथ से छूटकर नीचे गिर गए थे। जब मेरी जड़ता टूटी तो मैं चिल्लाते हुए घर की तरफ़ भागा। घर में माँ थी बस। माँ ने बताया कि कोई पंडितजी आए थे। उन्होंने उस पेड़ के लिए कहा कि यह तुम्हारे यहाँ कैसे? यह तो मुसलमानी पेड़ है। इससे गंदी गंदी हवाएँ निकलती हैं जो बहुत अशुभ होती हैं और घर में तरह तरह के रोग फैलाती हैं। यही नहीं अगर घर के सामने यह पेड़ रहे तो घर वालों का मन मांस खाने को करने लगता है। वे अपने धर्म के बारे में सब कुछ भूलने लगते हैं और इस तरह उनकी अगली पीढ़ी मुसलमान हो जाती है। बाबा यह सुनते ही भड़क गए। उन्होंने कहा कि नर्सरी वाला जरूर ही मुसलमान होगा और उसने जान-बूझकर यह पेड़ बचवा को दिया होगा। यह कहते हुए उन्होंने कुल्हाड़ी उठाई और पेड़ को काट डाला।

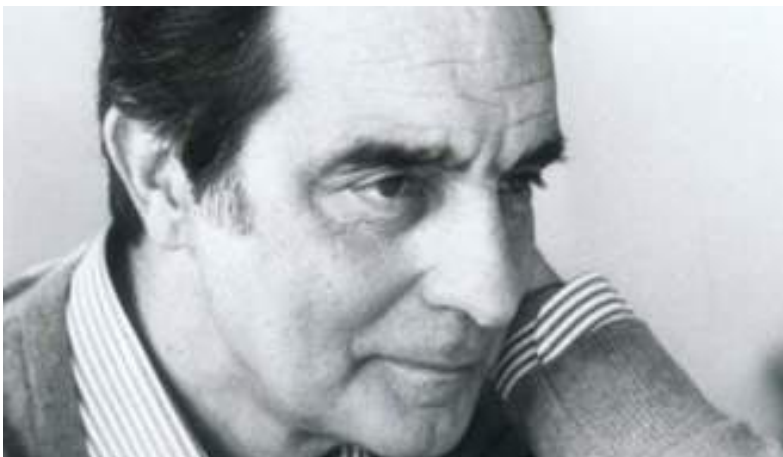
माँ की बात पूरी होते होते मैं चिल्ला-चिल्लाकर रोने लगा। माँ मुझे चुप कराने लगी। वह मुझे समझा रही थी कि कोई बात नहीं तुम वहाँ दूसरा पेड़ लगा देना। उन्हें क्या पता कि वह पेड़ कितनी मुश्किल और प्यार से मैंने इतना बड़ा किया था। मैंने माँ से कहा कि मैं मर जाता हूँ तुम दूसरा बेटा पैदा कर लेना। माँ ने मुझे चाँटा मारा पर तुरंत ही गले से लगा लिया। मेरी रुलाई बंद होने का नाम ही नहीं ले रही

थी। थोड़ी देर बाद बाबा आए तो अब तक का सारा डर भूलकर मैंने उनसे पूछा कि किससे पूछकर उन्होंने मेरा पेड़ काटा। बाबा ने मुझे गाली दी और कहा कि मेरा घर है मेरी ज़मीन है मैं जो मर्जी होगी करूँगा। मुझे किसी से पूछने की कोई जरूरत नहीं है।

तब मैंने उनसे पूछा कि मेरी साल भर की मेहनत का क्या? इसके पहले मैंने बाबा से कभी ज़बान नहीं लड़ाई थी। वे गुस्से में बमक उठे। बगल में पड़ा डंडा उठाया और मुझे कई डंडे मारे। वे गाली बक रहे थे कि साला मेरे ही घर में यह बिता भर का लौंडा मुझसे सवाल-जवाब करेगा। मेरे दरवाजे पर मुसलमानी पेड़ लगाएगा और मैं उसको काटूँगा नहीं उसमें जल चढ़ाऊँगा! पढ़ाई-लिखाई छोड़ के पेड़ लगाएँगे बबुआ। मालीगिरी करनी है। अब इस चक्कर में पड़े तो हाथ पैर तोड़ कर भीख मँगवाऊँगा। तभी उनकी नज़र उन पौधों पर गई जिन्हें मैं थोड़ी देर पहले मदीने के पास से ले आया था। वे एक साथ एक रस्सी में बँधे हुए थे। उन्होंने पाँचों को एक साथ उठाया और ज़मीन पर पटक दिया। वह पालीथीनें जिनमें मिट्टी भरी थी और जो जड़ों को सँभाले हुए थीं फटकर बिखर गईं। पाँचों पौधों की जड़ें नंगी हो गईं। बाबा ने उन्हें तोड़ा-मरोड़ा और दूर फेंक दिया।

बाकी पैतालिस पौधे कभी नहीं आए। मैंने अगले दिन सभी तैयार किए हुए गड्ढों में बबूल के बहुत सारे बीज डाल दिए। हालाँकि वे उगे या कि नहीं मैं दोबारा पलटकर देखने नहीं गया।

हिन्दी समय, महात्मा गाँधी,  
अन्तरराष्ट्रीय हिन्दी विश्वविद्यालय,  
वर्धा (महाराष्ट्र)  
मो. 8275409685



इटालो काल्विनो

दो कहानियाँ

## शहर में खुमियाँ \*

अंग्रेजी से अनुवाद : चंदन पाण्डेय

शहर की ओर दूर से आती हवा अपने साथ क्रिस्म-क्रिस्म के उपहार उड़ाकर ले आती है। इन उपहारों का सत्कार संवेदनशील लोग ही कर पाते हैं। जैसे नजले से पीड़ित कोई व्यक्ति जो दूर देश के फूलों से उड़ आए पराग कण के प्रभाव तक से छींक पड़ता है।

एक दिन, ईश्वर जाने कहाँ से, शहर की मुख्य सड़क से सटी तथा झाँकती हुई ज़मीन की पतली पट्टी तक, हवा अपने झोंके में कुछ बीज उड़ाकर ले आई जिससे वहाँ खुमियाँ (Mushrooms) उग आईं। सिवाय मार्कोवेल्लो नामक कामगार के जिसे हरेक सुबह उसी स्थान से ट्राम पकड़नी होती थी, उन पर किसी की नज़र नहीं पड़ी।

मार्कोवेल्लो दरअसल, शहरी जीवन के प्रति खिन्नता का भाव रखता था, विज्ञापन तख्तियाँ, यातायात की रंगीन बत्तियाँ, दुकानें, नियोन रोशनी की रंगीनियाँ, या फिर पोस्टर चाहे जितनी सावधानी से ध्यानाकर्षण बनाए गए हों, उसकी निगाह इस तरफ़ उठने के बजाय रेगिस्तान की रेत पर बिछल रही होती। इसके उलट, जिन

स्थितियों को निहारने में उससे कोई चूक कभी नहीं हुई, वे मजेदार थीं। डाल पर पीले होते पत्ते, छत से झूलता कोई पंख, घोड़ों की पीठ पर बैठी ऐसी कोई किलनी न थी,

---

\* Mushrooms in the city का अनुवाद

तख्तों में कीड़ों से बनाया गया ऐसा कोई छेद न था या फिर सड़क पर कुचली हुई अंजीर की ऐसी कोई छाल न थी जिसे देखकर मार्कोवेल्लो कोई टिप्पणी न करता हो। वो मौसम के मामूली परिवर्तनों, हृदय की ललक तथा अपने अस्तित्व के विषाद को लेकर चिंतित रहा करता था।

इस तरह, एक सुबह जब वह ट्राम का इंतज़ार कर रहा था जो उसे स्वाब एंड कम्पनी तक ले जाती जहाँ वह अप्रशिक्षित मजदूर लगा हुआ था, उस स्टॉप के नजदीक सड़क के किनारे वृक्षों के पास की पपड़ियाई एवम् ऊसर ज़मीन पर कुछ अजीबो-गरीब देखा। पेड़ की जड़ों के पास कुछ उभार दिखे जो जहाँ तहाँ खुले हुए थे तथा उभारों के भीतर से गोलाकार वस्तु झाँक रही थी।

तस्में कसने के बहाने झुककर उसने गौर से देखा, वे खुमियाँ थीं। शहर के बीचोबीच अंकुरित सचमुच की खुमियाँ! मार्कोवेल्लो को अपने इर्द-गिर्द की धूसर एवम् उदास दुनिया, अचानक छिपे खज़ानों के साथ उदार दिखने लगी; मुद्रास्फीति, सूचकांक, पारिवारिक अनुदान, जीवन गुज़ारते रहने के भत्ते, अनुबन्धित नौकरी के घंटे दर घंटे की मजदूरी से परे, ज़िन्दगी से अब भी कोई आशा रखी जा सकती है।

उस दिन काम पर वह सामान्य से ज़्यादा ही खोया-खोया-सा था। लगातार यही सोचता रहा, इधर वो सन्दूकों और बक्सों को ख़ाली करने में लगा है, उधर ज़मीनी अन्धेरे में शांत खुमियाँ जो सिर्फ़ उसकी जानकारी में हैं, अपनी गदबद मांसलता को पका रही होंगी, भूमिगत द्रव को अपने भीतर जमा कर रही होंगी। अपने आप से कहा, किसी एक रात की बारिश में ही ये खुमियाँ तैयार हो जायेंगी। लेकिन अपनी इस खोज के बारे में पत्नी और बच्चों को बताने से खुद को रोक न सका।

रात के अपर्याप्त भोजन के दौरान उसने घोषणा की, मैं बता दूँ कि एक हफ्ते के भीतर ही भीतर हम खुमियाँ खा रहे होंगे। चौचक, मस्त, भुनी हुई खुमियाँ! ये मेरा वादा है।

छोटे बच्चों को जो ये भी नहीं जानते कि खुमियाँ क्या होती हैं, उसने हुलस कर असंख्य प्रजातियों के सौन्दर्य, उनकी मनोरम महक तथा उनके पकाये जाने की विधि के बारे में बताया। इस तरह उसने अपनी पत्नी डोमिटिला को भी चर्चा में शामिल कर लिया जो अब तक अन्यमनस्क दिख रही थी।

‘ये खुमियाँ, कैसे मिलेंगी कहाँ?’ बच्चों का प्रश्न था। ‘हमें बताइये कि ये उगी कहाँ हैं?’

मार्कोवेल्लो के उत्साह पर इस प्रश्न से उपजे संशयी ख़याल ने घड़ों पानी डाल दिया : अगर मैं इन्हें जगह बता दूँ तो ये उपद्रवी बच्चे अपने दल के साथ जाकर खुमियों की तलाश करेंगे, बात आस-पड़ोस तक फैलेगी और आखिरकार वो खुमियाँ पड़ोस की कड़ाही में तली जायेंगी। इस तरह जिस खोज ने उसे तात्कालिक तौर पर सार्वभौमिक प्रेम से भर दिया था, अब उसे अविश्वसनीय भय एवम् ईर्ष्या से भर दिया था।

‘खुमियाँ कहाँ हैं- ये मैं जानता हूँ, और ये सिर्फ़ मैं हूँ जो जानता हूँ’, उसने अपने बच्चों से कहा, ‘अगर तुम सबने इसकी चर्चा कहीं की तो ईश्वर ही तुम्हारी रक्षा करेंगे।’

अगली सुबह, ट्राम स्टॉप पहुँचने तक मार्कोवेल्लो आशंकित था। वह झाँकने के लिए ज़मीन तक झुका और यह देखकर उसे राहत हुई कि खुमियाँ ज़्यादा तो नहीं पर यक़ीनन थोड़ा बढ़ी हैं। जबकि अब भी पूरी तरह मिट्टी से ढंकी हुई हैं।

झुके ही झुके उसने महसूस किया कि उसके पीछे कोई खड़ा है। एक झटक में खड़े होते हुए उसने उदासीन दिखने की कोशिश की। अपनी झाड़ू पर झुककर मार्कोवेल्लो को देखता हुआ वह झाड़ूकश था।

वह झाड़ूकश छरहरा और चश्मिश नौजवान था और उसके झाड़ू वाले अधिकार-क्षेत्र में खुमियों वाली जगह भी आती थी। उसका नाम अमादिगि था।

मार्कोवेल्लो इसे शुरू से ही नापसन्द करता था। शायद चश्में की वजह से जिसकी मदद से अमादिगि सड़क

के कोने अँतरों से प्रकृति के सूक्ष्मतरंगों को ढूँढकर अपनी झाड़ू से बुहार देता था।

यह शनिवार की बात है। एक आँख झाड़ूकश की झाड़ू पर तथा दूसरी आँख खुमियों पर गड़ाए हुए और 'खुमियाँ पकने में कितना समय लेंगी' की गणना करते हुए, मार्कोवेल्लो ने आधे दिन की छुट्टी, स्टॉप पर दमघोंटू धूल में बिताई।

उस रात बारिश हुई। उन किसानों की तरह, जो महीनों के सूखे के बाद बारिश की शुरुआती बूँदों से जगते हैं और खुशी से उछलने लगते हैं, मार्कोवेल्लो भी बिस्तरे पर बैठ गया और अपने बीबी-बच्चों को आवाज़ लगाते हुए कहने लगा, 'बारिश हो रही है। बारिश हो रही है।'... तथा बाहर से आती सोन्धी गन्ध को अपने भीतर महसूस करता रहा।

रविवार की किरण फूटते ही वो बच्चों को उधार की टोकरी के साथ हाँफते-हूँफते मंतव्य स्थल तक पहुँचा। वहाँ खुमियाँ मौजूद थीं। सीधी तनी हुई सोखे-सी खुमियों की छतरियाँ ज़मीन पर फैली हुई थीं। "हुर्रे..." वे उन्हें साग की तरह खोटने लगे।

'पापा, देखो उस आदमी को कितनी सारी मिली हैं', मिशेलिनो ने कहा और उसके पिता ने उड़ती निगाह से अपने पास खड़े अमादिगि को देखा, जिसके हाथ में खुमियों से भरी भारी टोकरी थी।

'अच्छ तो तुम भी इन्हें जमा कर रहे हो?' झाड़ूकश ने कहा, 'तो क्या ये खाने लायक हैं? कुछ मैंने भी चुग रखी हैं पर निश्चित नहीं था... सड़क से थोड़ी दूर ढेर सारी उगी हुई हैं तथा इनसे भी बड़ी... अब मैं समझा, मैं चलूँ अपने नात-गोतिया को भी बता दूँ जो अब तक इसी बहस में उलझे

हैं कि इन्हें तोड़ना चाहिए या नहीं..' और वह हड़बड़ाहट में हट गया।

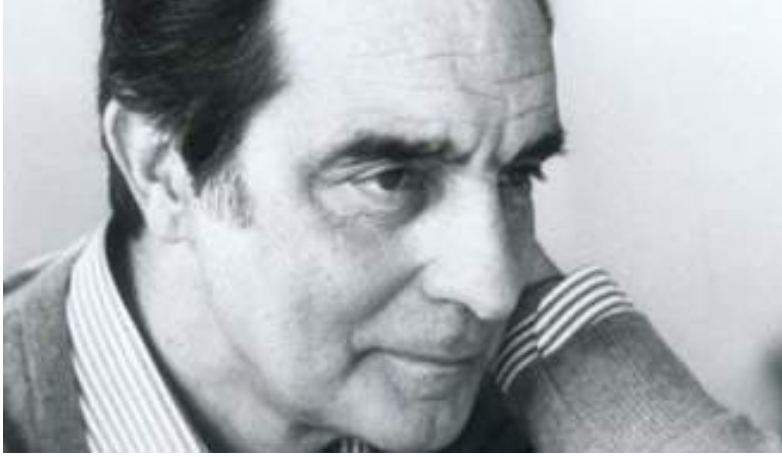
मार्कोवेल्लो अवाक रह गया था। इससे भी बड़ी खुमियाँ मौजूद हैं जिन्हें दूसरे लोग ले जा रहे हैं और अब उन्हें पाने की कोई गुंजाइश नहीं! एक क्षण के लिए वह गुस्से और उत्तेजना से पागल-सा हो गया, परंतु- जैसा कि कभी कभी होता है- व्यक्ति के आवेग का क्षरण उत्साहित करती हुई प्रेरणा में होता है- उस समय चूँकि मौसम में नमी और अनिश्चितता बरकरार थी इसलिए तमाम लोग अपनी बाँहों में छतरियाँ दाबे ट्राम का इंजिनार कर रहे थे। 'बन्धुओ, क्या आप आज की रात भुनी हुई खुमियाँ नहीं खाना चाहेंगे', मार्कोवेल्लो ने स्टॉप की भीड़ को आवाज़ लगाते हुए कहा, 'सड़क किनारे खुमियाँ उगी हुई हैं! ढेर सारी खुमियाँ! मेरे साथ आइये।' और वह लोगों की भीड़ लिए अमादिगि के पीछे चल पड़ा।

सबने भरपूर खुमियाँ बटोरीं, टोकरी न होने की स्थिति में सबने अपनी छतरियाँ खोल लीं। किसी ने सुझाया, 'सभी साथ मिलकर बड़े भोज का आयोजन करते तो गजब होता।' लेकिन, बजाय भोज के, लोगों ने अपने अपने हिस्से की खुमियाँ बटोरीं और घर की ओर निकल लिए।

वैसे, जल्द ही सब एक-दूसरे से मिले। वास्तव में उस शाम, अस्पताल के एक ही वार्ड में वे लोग मिले जहाँ मामूली उपचार से उनके शरीर का ज़हर फैलने से रोक दिया गया। मामला इसलिए भी गम्भीर नहीं था क्योंकि इतने सारे लोगों द्वारा खाई गई खुमियों की मात्रा बेहद कम थी।

मार्कोवेल्लो तथा अमादिगि की चारपाई आजू-बाजू ही थी; दोनों एक-दूसरे को घूरते रहे।





## कुल-कलंक \*

अंग्रेज़ी से अनुवाद : चंदन पाण्डेय

किसी ऐसे देश की बात है जहां सब के सब चोर थे।

रात घिरते ही हर कोई नकली चाभियों और मद्धिम जलती लालटेनों के साथ घर से निकले और किसी पड़ोसी के घर में चोरी कर ले। चोरी के सामान से लदे-फदे, भोर के समय जब वो अपने घर आते तो देखते कि उनका अपना घर ही लूटा जा चुका है।

इस तरह सब सुख-शान्ति से रह रहे थे, किसी को कोई नुकसान नहीं था क्योंकि पहला दूसरे से चुरा रहा था, दूसरा तीसरे से, तीसरा चौथे से और इस तरह आप उस आखिरी आदमी तक पहुँच सकते थे जिसने पहले के घर पर हाथ साफ़ किया हो। इस देश की व्यापारिक गतिविधियों में, ख़रीदने वाले और बेचने वाले, दोनों की तरफ़ से धोखाधड़ी अनिवार्य शर्त थी। उस देश की सरकार एक आपराधिक संगठन थी जो अपने देशवासियों से खुलेआम चोरी करती थी, और अपने तई देशवासी भी सरकार को चूना लगाने से बाज नहीं आते थे। इस तरह सबका जीवन कट रहा था, न कोई अमीर था और ना ही कोई ग़रीब।

एक दिन, हमें नहीं मालूम कि कैसे, यों हुआ कि एक ईमानदार शख्स इस देश में गुज़र-बसर करने चला आया। रात में बोरे, चाभियां और लालटेन लेकर निकलने के बजाय वह धूम्रपान करने के लिए और उपन्यास पढ़ने के लिए घर पर ही रुकता था। चोर आए, घर में रोशनी देख भीतर गए ही नहीं।

---

\* दि ब्लैक शीप का अनुवाद

कुछ दिन तक यह सिलसिला चला : तब सब मिल कर उस अजनबी को समझाने-बुझाने गए कि अगर वो बिना कुछ किए-धरे जीना चाहता है तो जिए लेकिन यह तो कोई ऐसी वजह नहीं कि दूसरों को भी अपना काम करने से रोका जाए। हर रात उस के घर पर रहने का एक मतलब यह था कि अगले दिन एक न एक परिवार भूखा रहता है।

ऐसे तर्कों के आगे वह ईमानदार नतमस्तक हो गया। रात को बाहर रहने और सुबह-दम वापस आने की बात तो उसने स्वीकार ली, लेकिन चोरी करने से इन्कार कर दिया। वह ईमानदार था, इसमें आपकी और हमारी क्या ग़लती है। वह हद से हद पुल तक जाता और नीचे बहते पानी को सारी रात देखता था। जब वह घर लौटता, पाता कि लूट हो चुकी है।

हफ्ते से भी कम समय में वह आदमी पैसे-पैसे को मोहताज हो गया। सारा घर इस तरह ख़ाली हुआ कि उसके पास खाने तक के लिए कुछ न बचा था। लेकिन यह तो कोई समस्या नहीं थी क्योंकि यह सब उसका ही किया- धरा था; असल मुश्किल यह थी कि उसके व्यवहार से सारा कारोबार उलट-पलट गया। चूँकि उसने खुद कुछ चुराए बिना अपना सारा असबाब चोरी होने दिया, इसलिए हर सुबह एक न एक शख्स, अपने हिस्से की चोरियां करते हुए, घर लौटता और पाता कि उसके घर का सामान अनछुआ ही पड़ा है। यह वह घर होता था जिसमें कायदन वो ईमानदार आदमी चोरी करने गया होता। तत्क्षण वह आदमी दूसरों से अमीर हो जाता जिसके यहां चोरी हुई नहीं थी। इस नए अमीर की चोरी वाली इच्छाएं भी जाती रहीं। मामले तब और बिगड़ते गए, जब ईमानदार आदमी के घर चोरी करने गए लोग, कुछ न पाकर, ख़ाली हाथ लौटने लगे; क्योंकि अभी वो गरीब होते जा रहे थे।

इसी बीच, जो नव धनिक हुए लोग थे वो रात के वक्त ईमानदार आदमी की तरह पुल तक जाने लगे थे और देर तक उसके नीचे बहते पानी को देखते थे। इन हरकतों से दुविधा बढ़ती गई क्योंकि इसका मतलब यह था कि बहुत से लोग अमीर होते जा रहे थे और बहुत से गरीब।

ऐसे में, अमीरों को लगा कि हर रात पुल पर जाते रहे तो जल्द ही वो गरीब हो जायेंगे। फिर उन्होंने विचारा : 'कुछ गरीबों को पैसे पर रख लेना चाहिए जो हमारे बदले चोरियां कर सकें' मिलजुल कर उन्होंने दस्तावेज़ तैयार किए, तनख्वाहें तय कीं, हिस्से तय किए: लेकिन चोर तो वो अब भी थे इसलिए हर-हमेशा एक दूसरे को छलने की कोशिश में लगे रहे। फिर भी, जैसा कि होता आया है, जो अमीर थे वो अमीर से अमीरतर होते गए और जो गरीब थे वो गरीब से गरीबतर होते गए।

कुछ रईस तो इस कदर रईस हो गए कि अमीर बने रहने के लिए उन्हें न तो खुद चोरी करने की जरूरत था न ही चोरी करवाने की। लेकिन अगर वो चोरियां बंद कर देते तो गरीब हो जाते क्योंकि बाकी के गरीब तो लगातार चोरी कर रहे थे। इसलिए उन्होंने सर्वाधिक गरीबों को इस बाबत तन्खवाह देना शुरू कर दिया ताकि वो अन्य गरीबों से इनकी सम्पत्ति की सुरक्षा कर सकें, इसका असर यह हुआ कि पुलिस थानों और जेल खानों का निर्माण शुरू हो गया।

इस तरह, उस ईमानदार आदमी के दृश्यपटल पर आने के कुछ ही वर्षों में हाल ऐसा हो गया कि लोगों ने अब लूटने और लुटे जाने की बात करना छोड़, सिर्फ अमीर और गरीब की बात करने लगे; लेकिन अब भी वो सब चोर ही थे।

इकलौता ईमानदार वही था जो शुरू शुरू में यहां आया था और वह जल्द से भी जल्द, भूखे रहने के कारण, मर गया था।



हेनरिख बोल

अंग्रेज़ी से अनुवाद : चंदन पाण्डेय

## हँसोड़ \*

मुश्किल में पड़ जाता हूँ जब कोई मुझसे ही मेरा पेशा पूछता है। संयत स्वभाव के बावजूद घबरा कर हकलाने लगता हूँ। ऐसे जनों से ईर्ष्या होती है जो कहते हैं : मैं राजमिस्त्री हूँ। नाइयों, किताब की दूकानवालों और लेखकों की सहज स्वीकृति भी मेरे जलन का सबब है। ये लोग बगैर किसी समझाइश के स्वपारिभाषित हैं, जबकि मैं अनेकानेक सवालों से दरपेश होता हूँ, अगर मैं कहूँ : मैं हँसोड़ हूँ। यह स्वीकारोक्ति अगले की भी मांग करती है, क्योंकि अगला सवाल दनदनाता हुआ आता है : तो क्या यही तुम्हारे जीवन-यापन का साधन है? बिला शक : हाँ। दरअसल, मैं इसी से गाढ़ी कमाई कर लेता हूँ, पेशेवराना अंदाज में कहें तो— मेरी हँसी की बड़ी माँग है। हँसोड़पने में मेरा अनुभव गहरा है, कोई दूसरा मुझ-सा हँसनेवाला नहीं है, ना ही किसी को हँसी की इस कला की बारीकियों का मुझ जैसा भान है। बेतुकी व्याख्या से बचने के लिए लम्बे समय तक मैं खुद को अभिनेता कहता रहा, किन्तु 'डायलागबाजी' और नकलचीपने में मेरा माहौल इतना कम था कि अभिनेता की उपाधि मुझे असत्य लगी : चूँकि सत्य मुझे प्रिय है और सच यह है कि मैं हँसोड़ हूँ। मैं न तो हास्य अभिनेता हूँ और ना ही जोकर। सनद रहे कि मैं लोगों को खुशमिजाज नहीं बनाता, मैं बस खुशमिजाजी का माहौल रचता हूँ। एक तरफ़ मैं यूनानी शहंशाह की तरह हँसता हूँ तो दूसरी तरफ़ स्कूल जाते मासूम बच्चे की तरह। सत्रहवीं शताब्दी की हँसी भी मुझे उतनी ही घरू लगती है जितनी उन्नीसवीं सदी

\* 'द लाफर' का अनुवाद

की, और अगर मौके की मांग हो तो समूची सदियों की, हर वर्ग की और उम्र के सभी पढ़ावों की हँसी हँस सकता हूँ : दरअसल हँसने की मेरी दक्षता वैसे ही है जैसे जूतों की मरम्मत-मज्जमत करने में मोची की। अपने कलेजे में मैंने अमरीकी हँसी, अफ्रीकी हँसी, गोरी, लाल, पीली- हर तरह की हँसी को पनाह दे रखा है- और सजीला मेहनताना मिलते ही मैं निर्देशक की लय पर इस हँसी को अपने कलेजे से परत दर परत उधाड़ता हूँ।

मैं अनिवार्य सा हो गया हूँ : मैं रेडियो पर हँसता हूँ, टेप में हँसता हूँ, और दूरदर्शन के निर्देशक मेरे साथ तहजीब से पेश आते हैं। मैं शोकाकुल, संयमित और उन्मादी, हर तरह की हँसी हँस लेता हूँ। मैं बस कंडक्टर या किराना दूकान के नौकर की तरह भी हँस लेता हूँ; निशाचरी हँसी, भोर की हँसी, डूबती शाम की हँसी, गोधुलि की हँसी... कहना दरअसल यह कि, जब भी और जहाँ भी हँसी चाहिए होती है- मैं उस जरूरत को पूरी करता हूँ।

यह धंधा थका देने वाला है, इसे बताने की जरूरत शायद ही हो, वो भी तब जब मैंने छूट की तरह फैलने वाली हँसी की इस कला में महारत हासिल कर रखी है। दिक्रत यह दरपेश हुई है कि इसने मुझे तीसरे या चौथे दर्जे का मसखरा बना दिया है, जो इस दिलफरेब भय के साए में बसर करते हैं कि उनका मुख्य संवाद दर्शकदीर्घा में अनसुना रह जाए, इसलिए मैं क्लब के कार्यक्रमों में सहयोगी की भूमिका निभाता हूँ, मेरा किरदार कार्यक्रम के कमजोर हिस्से में जोरदार हँसी हँसने का होता है। इस हँसी का समय माकूल होना चाहिए : मेरी दिली और गरजती हुई हँसी न तनिक जल्द आ सकती है और ना ही ज़रा विलम्ब से। पूर्व निर्धारित पल पर जैसे ही मेरी हँसी छूटती है, समूची दर्शकदीर्घा ठहाकों में डूब जाती है और इस तरह चुटकुला काम कर जाता है।

पर जहां तक मेरा मामला है, थका मांदा मैं खुद को ग्रीन रूम तक खींचता हूँ, इस खुशी में अपना कोट उठाता हूँ कि आज का दिन खत्म हुआ और अब घर जाना है। घर पर मेरा इंतज़ार कुछ ऐसे तार कर रहे होते हैं: “आपकी हँसी चाहिए, तुरंत। रिकार्डिंग मंगवार को है” और कुछ ही घंटों में अपने भाग्य को कोसते हुए मैं किसी रेलगाड़ी की भीषण गर्मी में सफ़र कर रहा होता हूँ।

शायद ही बताना पड़े कि रोज के काम के बाद या छुट्टियों के दौरान मेरा हँसने का जी नहीं होता : ग्वाले कुछ पल के लिए खुश तभी हो पाते हैं जब अपने मवेशियों को भूल सकें, राजमिस्त्री की खुशी गारे और सीमेंट के मसाले को भूलने में निहित है, बड़इयों के घर के दरवाज़े अक्सर किसी टूट का शिकार मिलते हैं या ऐसी दरारें मिलती हैं जिन्हें खोलना मुश्किल भरा काम होता है। हलवाई अचार के मुरीद मिलते हैं तो कसाई बादाम की मिठाई के और बेकरी के कारोबारी कबाब पसंद करते हैं; सांडों से लड़ने वाले शौकिया तौर पर कबूतर पालते हैं, मुक्केबाज अपने बच्चों की नाक से निकलता ज़रा सा खून देख कर पीले पड़ जाते हैं: मुझे यह सारी बातें सहज जान पड़ती हैं क्योंकि ‘ड्यूटी’ के बाद मैं कभी नहीं हँसता। मैं गंभीर इंसान हूँ और लोग- शायद सच ही मैं- मुझे निराशावादी मानते हैं।

अपनी शादी के पहले कुछ वर्षों तक मेरी पत्नी अक्सर मुझसे कहती थी: “हँसो ना!” लेकिन फिर उसे भी यह एहसास हो गया कि मैं उसकी यह ख़्वाहिश पूरी नहीं कर सकता। जब भी मुझे नितांत एकांत में अपने चेहरे की मांसपेशियों को और आत्मा के तनाव को ढीला छोड़ने का मौका मिलता है मुझे खुशी होती है। दूसरों की हँसी भी मेरे मन-मस्तिष्क में खटके की तरह लगती है क्योंकि इससे मुझे अपने पेशे की याद आ जाती है। हमारा वैवाहिक जीवन शान्तिपूर्वक बीत रहा है क्योंकि मेरी पत्नी भी हँसना भूल चुकी है : जब कभी मैं उसे मुस्कुराते हुए पाता हूँ, मैं भी, जवाब में, मुस्कुरा देता हूँ। हमारे आपस का संवाद भी धीमी आवाज़ में होता है क्योंकि नाईट क्लबों के शोर को मैं नापसंद करता हूँ और उस शोर को भी जो कभी कभी रिकोर्डिंग स्टूडियो में भर जाता है। मुझसे अंजान लोग मुझे चुप्पा बुलाते हैं। यह सच भी हो सकता है क्योंकि अक्सर मुझे हँसने के लिए ही मुँह खोलना पड़ता है।

अगर कुछेक मुस्कुराहटों को बिसरा दूँ तो समूचा मेरा जीवन भावशून्य कट रहा है। बाजदफे मैं खुद को इस बात पर चकित पाता हूँ कि मैं कभी हँसा भी हूँ या नहीं। मेरे ख़याल में : नहीं। अपने सभी बहन भाइयों की स्मृति में मैं बेहद गंभीर इंसान की शक्ल में दर्ज हूँ।

मैं अनेकानेक तरीकों से हँसता तो हूँ, लेकिन मैंने अपनी ही हँसी को कभी नहीं सुना है।



स्वेटलाना अलेक्सियेविच

## तोपखाने का कप्तान

अंग्रेजी से अनुवाद : चंदन पाण्डेय

(इस वर्ष के नोबेल पुरस्कार से सम्मानित स्वेटलाना अलेक्सियेविच की किताब: 'जिंकी ब्वायेज-सोवियत वॉइसेज फ्रॉम अफगानिस्तान वॉर' का एक अंश। 1986 में स्वेटलाना ने यह गजब का काम किया कि वे सोवियत-अफगान युद्ध के प्रभावितों, भागीदारों और उनके जानने पहिचानने वालों से मिलीं। उनके साक्षात्कार किए, बयान दर्ज किए और डायरी लिखी। इनमें रूसी और अफगानी सैनिक, सैनिक के परिवार, अधिकारी, दलाल, यात्री आदि सब शामिल हुए। इसे ही दस्तावेज़ के रूप में दर्ज करते हुए इस पुस्तक का निर्माण हुआ।)

मैं सौभाग्यशाली था। सही सलामत आँखें, पैर और हाथ के साथ अपने घर में जीवित लौटा। मैं जला नहीं था और ना ही पागल हुआ। कायदन यह लड़ाई हमारी नहीं है, इसका एहसास हमें शुरू-शुरू में ही हो गया पर हमने तय किया, खुद को जीवित रखते हुए इसे खत्म करते हैं और घर चलते हैं। फिर इसके अच्छे बुरे पहलुओं पर सुनने-गुनने के लिए हमारे पास भरपूर समय रहेगा।

मैं अफगानिस्तान जाने वाले पहले सैन्य-दस्ते में था। हमारे पास, आदर्श नहीं, आदेश थे। आदेशों पर चर्चा नहीं करते- अगर आदेशों को चर्चा का विषय बनाते हैं तो सेनाओं की उम्र सन्दिग्ध हो जायेगी। एंगल्स का कथन आप जानते होंगे? 'सैनिक उस गोली की तरह होते हैं जो चलने के लिए हर-पल तैयार रहती है।' यह कथन मैंने अपने भीतर जज्ब कर लिया है। युद्ध में आप हत्या करने के लिए ही जाते हैं। हत्या करना मेरा व्यवसाय है- मुझे प्रशिक्षण भी इसी का मिला है।

क्या मैं खुद के लिए भय खाए हुए था? मैंने दरअसल यह मान लिया था कि बाकी लोग भले मारे जाएँ, मैं नहीं मरने वाला। दरअसल आप अपने ध्वंस की सम्भावना को सोच भी नहीं सकते। और यह भी न भूलें कि जब वहाँ गया तो मैं बच्चा नहीं था, तीस का हो चुका था।

वहाँ मैंने जीवन के उदात्त आशय को समझा। बेधड़क कहूँ तो यह कि वो मेरी उम्र के सर्वश्रेष्ठ वर्ष थे। यहाँ (रूस में) जीवन धूसर और संकीर्ण है : दफ्तर-घर, घर-दफ्तर। वहाँ हमें खुद के लिए खुद ही सब कुछ करना होता था और यह पौरुष के इंतहान सरीखा था।

वहाँ काफी कुछ आकर्षक भी था : सूनी घाटियों में भोर वाली धुन्ध धुएँ के परदे की मानिन्द लहर लेती हुई उठती थी, या वो बरूबखैकी-लम्बी पाल वाले चमकीले अफगानी ट्रक, और लाल धारी वाली बसें जिनमें भेड़, गाएँ और मनुष्य बेतरतीबी से भरे हुए रहते थे, और वो पीली टैक्सियाँ... कई जगहें ऐसी होती हैं जो अपने लौकिक दृश्य में चाँद की याद दिलाते हैं। आप इस महसूसियत से पूरम-पूर भर रहे होते हैं कि उन अजर-अमर पहाड़ों में जीवन का एक रेशा तक नहीं है, चट्टानों से अलग वहाँ कुछ भी नहीं है- तब तक ये एहसास आप में बना रहता है जब तक वो चट्टानें आप पर गोली नहीं दागने लगती हैं! आप समझ जाते हैं कि प्रकृति भी आप से शत्रुता रखने लगी है।

अपनी हस्ती जीवन और मृत्यु के बीच फंसी थी- और हम अपने हाथों में दूसरों के जीवन-मृत्यु के धागे थामे हुए थे। क्या इससे भी शक्तिशाली कोई भाव सम्भव है? हम फिर कभी उस तरह नहीं चलेंगे, उस तरह प्रेम नहीं करेंगे और ना ही हमसे कोई वैसा प्रेम करेगा जैसा अफगानिस्तान में हमने कर लिया। मृत्यु की सर्वत्र नजदीकी ने हर चीज को अनूठी ऊँचाई दे रखी थी : मृत्यु हर पल और हर क्षण में व्यापी हुई थी। जीवन साहसिक कारनामों का आरामगाह हो गया था : मैंने ख़तरे की गन्ध पहचानना सीख लिया- अब मेरे लिए यह एक अतिरिक्त इन्द्रिय अनुभव हो चुका है। यों तो इसे 'अफगान सिन्ड्रोम' कहा जाता है पर यह सच है कि हम में से बहुत सारे लोग वहाँ वापस जाना चाहते हैं।

हमने सही-ग़लत के खांचे में सोचने की जहमत कभी नहीं उठाई। अपने अपने प्रशिक्षणों के अनुसार हमने सारे आदेश पालन किए। बेशक, अब अतीत तथा अन्य सूचनाओं के आधार पर पूरे अफगानिस्तान-युद्ध पर पुनर्विचार हो रहा है पर दस वर्ष पूर्व, समय ऐसा नहीं था। उन दिनों हमारे सामने दुश्मन की छवि स्पष्ट थी, किताबों, स्कूल और सिनेमा के माध्यम से बनी छवि। जैसे, मान लीजिए, 'द हवाईट डेजर्ट सन' नाम की फिल्म। उस फिल्म को पाँच

बार तो कम-अज-कम देखा ही होगा। अभी हम इस शिकायत से दो-चार हो ही रहे थे, हम दूसरे जंग-ए-अजीम के बाद की पैदाइश हैं कि यूरेका! वाले अन्दाज में एक रेडीमेड युद्ध हमारे क्षितिज पर टाँग दिया गया। हम जंगों और इंकलाबों से प्रेरणा पाते हुए बड़े हुए।

तो मैं बता रहा था कि अफगानिस्तान जाने वाले पहले सैन्य-दस्ते में हम थे। छावनी, सैन्य-क्लब और कैंटीन की नींव रखते हुए हम बेहद खुश थे। हमें टीटी-44 पिस्तौलें तवील की गई थीं, जिन्हें आपने पुरानी फिल्मों के राजनयिक अधीक्षकों को झुलाते हुए देखा होगा। उन बन्दूकों का इससे पेशतर कोई इस्तेमाल न था कि उससे खुद को ही गोली मार ली जाए या फिर उन्हें बाजार में बेच दिया जाए। हमें जो हाथ लग जाए जैसे पजामा या वर्दी, वही पहन कर बाजारों में घूमते थे। मुझे 'श्वैक' नाम वाले भले फौजी का दर्जा मिला था। तापमान पचास डिग्री हो तो भी हमारे अधिकारी हमसे टाई समेत पूरी वर्दी पहनने की अपेक्षा रखते थे।

शुरू में मुर्दाघरों में कटे-पिटे मानव शरीर और माँस के लोथ देखे जो किसी झटक से कम न थे। फिर ऐसा हुआ कि हम सिनेमा देख रहे होते और पर्दे के पीछे अगर गरजते हुए गोले बरस रहे हों तो भी हम सिनेमा में मशगूल रहते... या फिर हम वॉली-बॉल खेल रहे होते थे और अगर बमबारी शुरू हो जाए तो पल-छिन के लिए रुक पर यह देखते कि बम किस दिशा में बरस रहे हैं और फिर अपने खेल में रम जाते। जो फिल्में हमें भेजी जाती थीं उनमें या तो युद्ध होते थे या लेनिन या फिर पतियों के साथ बेवफाई रचती स्त्रियाँ। मैं तो खुशी-खुशी उन स्त्रियों को भून डालता जो स्त्रियाँ पराए मर्दों के साथ, अपने पतियों की गैरमौजूदगी में, बिस्तर साझा करती थीं। हम सब हास्य फिल्में चाहते थे लेकिन साहबों ने एक न भेजी। दो से तीन चादरों को सिल कर परदा बनाया गया था और हम, दर्शक बालू पर बैठ कर फिल्में देखते थे।

सप्ताह में एक दफे हमें स्नान और मयनोशी का मौका मिलता था। भर बोतल वोदका की कीमत तीस 'चेकी' होती थी, इसलिए हम अपने वतन से ही लेकर आते थे। सीमा शुल्क के नियमानुसार वोदका के दो बोतल, वाईन की चार बोतल और बीयर की अनगिन बोतलें ला सकते थे, इसलिए हम बीयर की तमाम बोतलों को खाली कर उसमें वोदका भर लेते। अन्यथा तो पीने का पानी भी चालीस

डिग्री वाला मिलता। नशे के लिए लोग हवाई जहाज के लिए इस्तेमाल किया हुआ किरोसिन या हिमनिरोधी (एंटीफ्रीज) पी लेते थे। नये रंगरूटों को हम हिमनिरोधी पीने से मना करते थे, कहते थे- और चाहें जो कुछ पी लो, पर कुछ ही दिन में ये रंगरूट अस्पताल में अपनी क्षति खाद्यनली के साथ मिलते।

हम चरस पीते थे। अपने एक साथी ने एक दिन ऐसी चरस चढ़ा ली कि युद्ध मैदान में चल रही सभी गोलियों पर उसे अपना ही नाम लिखा हुआ लग रहा था। दूसरे ने एक रात इतनी चरस पी ली कि वो परिवार के साथ होने के दुःस्वप्न में फंस गया, और अपनी पत्नी को चूमने भी लगा। कुछ को सिनेमा की तर्ज पर सारे रंग नजर आने लगते थे। पहले तो व्यापारियों ने इसे हमें बेचा फिर हमें मुफ्त ही देने लगे, कहते- 'लगे रहो, रस्कियो, तुम्हारी ही मौज है!' बच्चे हमारे पीछे दौड़ते और इसकी पुड़िया हमारी मुट्टियों में फंसा देते।

न जाने कितने मेरे मित्र मारे गए। एक की एड़ी से 'माईन बम' के नंगे तार दब गए, उसने बम के छल्ले खुलने की आवाज़ भी सुनी, और जैसा कि होता है, बेहद हड़बड़ी में ज़मीन पर लेटने के बजाय गहन अचम्भे में आवाज़ की उस जगह को देखने लगा। वह दर्जनों कील और बारूद के घावों से मरा। दूसरी किसी जगह एक टैंक इस कदर भयावह रूप से फटा कि उसका नीचला तल्ला 'जैम' की शीशी के मानिन्द खुल गया था और इसके पट्टे में छिपी इल्लियाँ बेतहाशा उड़ रही थीं। चालक ने भागने की कोशिश की थी, हमने देखा कि उसका एक हाथ बाहर झूल रहा था और बस इतना ही- वो अपने ही टैंक में जल गया था। इधर छावनी में कोई भी उसके बिस्तर पर सोना नहीं चाहता था। एक दिन एक नया रंगरूट आया और हमने उसे वही बिस्तर दिया, यह कहते हुए कि 'तुम तो उसे जानते भी नहीं थे यार, तुम्हें क्या फर्क पड़ता है...'

सर्वाधिक उदासी हमें उनकी मौत पर होती थी जिनके बच्चे थे, बच्चे जो अब पिता की अनुपस्थिति में ही बड़े होंगे। दूसरी तरफ यह ख्याल भी हमें घेर कर मारता था कि उनका क्या जिनके पीछे कोई नहीं, वो तो ऐसे मर गए जैसे वो कभी रहे ही न हों ?

यह युद्ध लड़ने के लिए हमें तनखाह बेहद मामूली मिलती थी : कहने को तो हमें मूल वेतन का दो गुना मिलता था पर उसमें से टैक्स, सदस्यता राशि और नाहक के कुछ खर्चे काट लिए जाते थे। और मिलता भी क्या था : 270 अफगानी मुद्रा वो भी, नगद नहीं, रसीद मिलती थी। उन दिनों सुदूर उत्तर में काम करने वाले सिपाहियों को 1500 मुद्राएँ मिल रही थीं। 'सैन्य सलाहकार' हमसे दसक गुना अधिक कमा रहे थे। यह अंतर तब और विकराल दीखता था जब हम सीमा पार कर रहे होते : हमारे पास दो-एक जोड़ी जिंस और एक टेप रिकार्डर होता था वहीं उत्तर से आने वालों के पास दर्जन भर भारी बक्से होते थे जिन्हें खींचने वाले भी परेशान हो जाते।

सोवियत संघ, यानी ताशकन्द की हमारी वापसी भी आसान न थी।

'अफगान से आए हो ? लड़की चाहिए ? मेरे यार, तुम्हारे लिए मेरे पास एक जब्बर माल है, महुए के फूल सरीखी नर्म...' 'ना। मैं छुट्टियों पर हूँ और घर जाना चाहता हूँ। पत्नी के पास। मुझे टिकट चाहिए'

'टिकट पैसे से मिलते हैं, बाबूजी... क्या तुम यह इतावली चश्मा बेचना चाहोगे'

'यही तरीका है'

स्वर्डलॉवस्क तक की हवाई यात्रा के लिए मुझे 100 रूबल के साथ अपना इतावली चश्मा, जापानी लुरेक्स स्कार्फ और एक फ्रांसीसी मेक अप किट खर्चना पड़ा। टिकट की कतार में मुझे पता पड़ा कि चीजें कैसे काम करती हैं : 'यहाँ कतार में दिनों-दिन खड़े रहने की क्या जरूरत मियाँ ? अपने रोजगारिया पासपोर्ट में चालीस रसीदें डालकर आगे बढ़ाओ और अगले दिन घर पहुँच जाओ।'

तो भी मैं टिकट-खिड़की तक पहुँचता हूँ, 'स्वर्डलॉवस्क का एक टिकट।'

'टिकट नहीं हैं। आँखें फाड़ कर ऊपर देखो- सूचना लिखी हुई है'

मैं चालीस रसीदें बढ़ाता हूँ और फिर कोशिश करता हूँ, 'स्वर्डलॉवस्क के लिए एक टिकट मैडम, प्लीज।' 'मैं

दुबारा पता करती हूँ। ओहो! आप बहुत भाग्यशाली हैं, देखिए अभी अभी कोई अपना टिकट वापस कर गया है'

अपने वतन लौटते हुए आप नितांत दूसरी दुनिया में उतरते हैं- परिवार की दुनिया। पहले कुछ दिन तक आप उनका कुछ भी कहा हुआ सुन नहीं पाते। आप बस उन्हें देखते हैं, उनका स्पर्श महसूसते हैं। इतना सब कर गुजरने के बाद किसी दिन आप अपने बच्चों का सिर सहलाने का एहसास कैसा होता है, यह मैं बता नहीं सकता। सुबह के कॉफी और पैन-केक की महक... सुबह के नाश्ते के लिए बीवी की पुकारती हुई आवाज... बस, मैं बता नहीं सकता, ये एहसास कैसे हैं?

एक महीने में आपको वापस जाना होता है। वजह और जगह-दोनों नहीं पता। आप इस बारे में सोचते ही नहीं-कायदन, सोचना भी नहीं चाहिए। आप इतना भर जानते हैं कि आपको जाना है। किसी रात अपनी पत्नी के ढीले आगोश में पड़े हुए आपके दाँतों में अफगानिस्तान की नर्म रेत का स्वाद फैल जाता है। अभी कुछ दिनों पहले ही तो आप उस रेत में अपनी सैन्य-टुकड़ी के साथ लेटे हुए थे... आप जागते हैं और बिस्तर से कूद पड़ते हैं- आप खुद को याद दिलाते हैं, आज आप घर पर हैं। कल सुबह आपको लाम पर जाना है।

आज पिताजी ने सूअर-कशी के लिए मुझे बुलाया। अतीत के ऐसे बुलाओं पर मैं कान पर हाथ रख कर भाग

जाता था ताकि मैं मरते सूअर की चीख भी न सुन सकूँ। पर आज मैं पिता से कहता हूँ, 'थमिए जरा, ऐसे नहीं पकड़ते, सीधे दिल पर निशान साधिए, ऐसे' और मैं चाकू के एक ही वार से उसे मार डालता हूँ।

शुरू में मुर्दाघरों में कटे-पिटे मानव शरीर और माँस के लोथ देखे जो किसी झटके से कम न थे। लेकिन यह प्रक्रिया थमने नहीं जा रही है क्योंकि सब यही सोचते हैं कि पहले अपना खून न बहे। एक बार की बात, कुछ सैनिक बैठे थे और वहाँ से एक बूढ़ा आदमी अपने खच्चर के साथ गुजर रहा था। अचानक ही एक सैनिक ने मोर्तार उठाया और खच्चर तथा उस बुजुर्ग को मार गिराया।

'अबे ओ! पागल हो गए हो तुम लोग? इस बुजुर्ग और खच्चर ने तुम्हारा क्या बिगाड़ा था?' कल ऐसे ही एक बूढ़ा अपने खच्चर के साथ गुजरा और जैसे ही वो गुजरे हमने देखा कि अपना एक साथी मरा हुआ यहाँ पड़ा है'

'लेकिन यह भी हो सकता है कि ये दूसरे रहे हों?'

खून बहाने वाला पहला आदमी बनने की सबसे बड़ी दुर्दशा यह है कि आप जीवन भर अतीत के बुजुर्ग और अतीत के ही खच्चर को गोली मारते रहते हैं।

हमने वह युद्ध किया, जीवित रहे और घर लौटे। अब वह माकूल समय है कि हम कोशिशों के बल पर उस समूचे युद्ध से कोई मतलब निकालें...

संपर्क : 9901822558

chandanpandey1@gmail-com

<mailto: chandanpandey1@gmail-com>



फ्रेंच कहानी



आल्फोंस दोदे

दो कहानियाँ

## अंतिम कक्षा

मूल फ्रेंच से अनुवाद : श्रीनिकेत कुमार मिश्र

उस सुबह, मुझे स्कूल जाने में बहुत देर हो गयी थी और मुझे डर लग रहा था कि श्रीमान हैमल मुझे डांटेंगे क्योंकि उन्होंने कहा था कि वे हमसे कृतंत के बारे में पूछेंगे और मुझे इसके बारे में कुछ भी याद नहीं था। एक क्षण के लिए मेरे मन में विचार आया कि आज स्कूल ना जाऊं और यहीं मैदान में खेलूँ।

उस दिन मौसम बिल्कुल सुहाना और आसमान एकदम साफ़ था।

मैं पेड़ों से आ रहे पक्षियों के चहचहाने की आवाज को साफ़-साफ़ सुन सकता था और फिर मैंने आरा मशीन के पीछे रीपर्ट मैदान में जर्मन सेना को मार्च करते देखा। यह सब मुझे कृतंत के नियमों से बहुत अच्छा लग रहा था, पर मैं इन सब को छोड़ कर तेज़ी से स्कूल की तरफ़ दौड़ा।

मैंने टाउनहाल से गुजरते हुए देखा कि वहाँ के नोटिसबोर्ड के आस-पास लोग इकट्ठे हैं। विगत दो वर्षों से, इस जगह से ही हमें सारे बुरे समाचार प्राप्त होते हैं; जैसे युद्ध में हार, अधिग्रहण, हेडक्वार्टर के आदेश; और मैंने बिना रुके सोचा :

आल्फोंस दोदे 19वीं शताब्दी के प्रसिद्ध फ्रांसीसी लेखक हैं। उनका जन्म 13 मई 1840 को फ्रांस के नीम शहर में हुआ था। वह एक लोकप्रिय कहानीकार, उपन्यासकार, नाटककार एवं कवि थे।

“अब क्या हुआ ?”

फिर, जब मैं दौड़ते हुए उधर से गुजर रहा था, तब वाचर लोहार, जो अपने सहायक के साथ वहां पोस्टर पर लिखे को पढ़ा रहा था, ने मेरी तरफ चिल्ला कर कहा :

“दौड़ो मत बच्चे, आज तुम्हें स्कूल पहुँचने में देर नहीं होगी।”

मुझे ऐसा लगा जैसे वो मेरा मजाक उड़ा रहा हो और मैं हाँफते हुए श्रीमान हैमल के अहाते में पहुँचा।

सामान्यतः कक्षा शुरू होने पर काफ़ी शोर होता था जो गली तक सुनाई देता था। कुछ डेस्क खुले होते और कुछ बंद, हम लोग अच्छी तरह से याद करने के लिए कान पर हाथ रखकर जोर से पाठों को दुहराते और शिक्षक अपनी लंबी इंच को मेज़ पर पटकते हुए कहते:

“थोड़ा धीरे!”

मैं सोच रहा था कि कैसे मैं बिना ध्यान में आए, अपने बेंच पर बैठ जाऊँ पर उस दिन वहाँ नीरव शांति पसरी थी जैसे कि कोई रविवार का दिन हो। खुली खिड़की से मैंने देखा कि मेरे सभी सहपाठी अपनी जगह पर पहले से बैठे हुए हैं और श्रीमान हैमल लोहे की वही इंच लिए कक्ष में इधर-उधर चिंतामग्न टहल रहे हैं। इसी घनघोर शांति में मुझे दरवाज़ा खोलना और अंदर प्रवेश करना था। आप सोच सकते हैं मैं कितना लज्जित और डरा-सहमा होगा।

खैर! कुछ नहीं हुआ। श्रीमान हैमल ने मुझे बिना क्रोध के देखा और बड़ी धीरे से कहा :

“मेरे नन्हें फ्रांज़, जल्दी से अपनी जगह पर जाओ; हम तुम्हारे बिना ही शुरू करने जा रहे थे।”

मैं अपनी बेंच की तरफ गया और धम से अपनी जगह पर बैठ गया। तब जाकर मैं अपने डर से उबरा और ध्यान दिया कि हमारे शिक्षक ने आज अपनी खास हरे रंग की कोट, झालरदार टाई और रेशमी काली टोपी पहनी है जो वे स्कूल निरीक्षण के दौरान या फिर पुरस्कार वितरण के दिन पहना करते थे। इसके अलावा, पूरी कक्षा आज असाधारण रूप से शांत एवं गंभीर थी। लेकिन सबसे

आश्चर्यजनक मुझे यह देखकर लगा कि क्लास के पीछे की सीटों जो अक्सर खाली रहती थीं, वहाँ आज गाँव के लोग बैठे थे और वे सब भी हमारी तरह शांत थे; त्रिकोर्न टोपी में वृद्ध हौसर, पूर्व मेयर-डाकिया और फिर और भी लोग मौजूद थे। सभी लोग दुखी दिख रहे थे और हौसर एक पुरानी कुतरी हुई ककहरा की किताब लाये हुए थे जिसे उन्होंने अपनी गोद में खोल कर रखी हुई थी और अपने मोटे चश्मे से अक्षरों को देखने की कोशिश कर रहे थे। यह सब देख कर मैं हैरत में था तभी श्रीमान हैमल अपनी कुर्सी से उठे और उसी धीरे-गंभीर और शांत आवाज़ में सभी बच्चों को संबोधित किया :

“मेरे बच्चो! यह आखिरी कक्षा है जो मैं पढ़ा रहा हूँ। बर्लिन से आदेश आया है कि अब आलसास और लोरेन के स्कूलों में सिर्फ जर्मन भाषा पढ़ाई जाय। कल नये शिक्षक आ रहे हैं। आज, यह फ्रेंच की अंतिम कक्षा है। मैं आपसे सभी से आग्रह करता हूँ कि आप ध्यान से सुनें।”

ये शब्द मुझे परेशान एवं दुखी कर रहे थे। आह! कितना मनहूस दिन था यह! अब मुझे समझ में आया कि यह वही आदेश था जो टाउन हाल पर लगा हुआ था। मेरी फ्रेंच की अंतिम कक्षा...

और मैं बड़ी मुश्किल से लिख पाता था! अब क्या मैं कभी सीख पाऊँगा! इसलिए मेरा वहाँ ठहरना जरूरी था!... अब मुझे अपना गुज़रा हुआ वक्त वापस चाहिए था; जो कक्षाएँ मेरी, घोंसलों के पीछे दौड़ने और सार नदी में तैरने के कारण छूट गयी थीं, उन्हें मैं फिर से करना चाहता था। जो पुस्तकें अभी कुछ समय पहले तक बहुत उबाऊ और बोझिल जान पड़ती थीं, मेरा व्याकरण, मेरा गौरवमयी इतिहास; अब वे सब मुझे पुराने अंतरंग मित्र लगने लगे जिनसे बिछड़ने का दर्द मेरे लिए असह्य था। श्रीमान हैमल भी मुझे अच्छे लग रहे थे और उनके दंड एवं उनके इंच की मार मैं भूल चुका था क्योंकि अब लग रहा था कि मैं उन्हें फिर कभी देख नहीं पाऊँगा।

बेचारे, श्रीमान हैमल बहुत अच्छे आदमी थे!

अब जाकर मैं समझा कि आज ऐसा क्यों है, क्यों आज गाँव के बूढ़े लोग कक्षा में आकर पीछे बैठे हैं और क्यों

रविवार की अच्छी आदतें आज दिखायी दे रही हैं। आज ऐसा प्रतीत हो रहा था कि वृद्ध लोग पछतावा कर रहे हैं कि वे पहले प्रायः क्यों नहीं इस विद्यालय में आये। यह एक तरीका था जिससे उस शिक्षक के प्रति कृतज्ञता व्यक्त हो जिसने बड़ी लगन से अपने जीवन के बहुमूल्य चालीस वर्ष इस विद्यालय एवं गाँव की सेवा को समर्पित किये हों एवं दूसरा, यह अपने देशप्रेम को प्रदर्शित करने का जरिया था।

अभी मैं अपने इन्हीं विचारों में खोया ही था कि सुना कि मेरा नाम पुकारा जा रहा है। अब मेरे बोलने की बारी थी। मुझे कूदंत का लंबा एवं प्रसिद्ध नियम ऊँची एवं स्पष्ट आवाज में बताना था और कोई गलती भी नहीं होनी चाहिए थी। पर, मैं पहले ही शब्द पर लड़खड़ा गया; भारी मन से सर झुकाए अपनी जगह पर खड़ा रहा। मैंने श्रीमान हैमल को कहते सुना :

“मेरे प्यारे फ्रांज़, मैं तुम्हें अब नहीं डाँटूँगा, पहले ही तुम बहुत ज़्यादा डांट खा चुके हो... तुम्हारे लिए उतना काफी है। रोज हम खुद से कहते हैं : वाह! अभी तो काफी समय है। मैं कल पढ़ लूँगा। और अब तुम देख रहे हो क्या हुआ... ओह! हमारे आलसास के लिए बहुत दुर्भाग्य है कि हम आज का काम कल पर टाल देते हैं। अब वे लोग अधिकार से कह सकते हैं कि कैसे फ्रांसीसी हो; अपने आप को फ्रांसीसी कहते हो एवं अपनी भाषा को न पढ़ना जानते हो और न ही लिखना। पर, मेरे बदनसीब फ्रांज़! इन सब में तुम्हारा दोष उतना नहीं है, जितना हम सबका है। हम सभी इसके लिए समान रूप से जिम्मेदार हैं। हम सभी को खुद से पूछना होगा कि हमने अपनी तरफ से क्या किया?”

“तुम्हारे माता-पिता ने तुम्हारी पढ़ाई पर उचित ध्यान नहीं दिया। वे तुम्हें कुछ चंद पैसों की खातिर खेलों में एवं मिल में काम करने के लिए भेजते रहे। खुद मैं भी कम दोषी नहीं हूँ। क्या मैंने तुम्हें पढ़ने के बजाय बाग में पौधों को सींचने के लिए नहीं भेजा? और जब मुझे ट्राउट मछली पकड़ने जाना होता था तो क्या तुम्हें छुट्टी देने में मुझे झिझक होती थी?...”

और इस तरह से, बात करते-करते, श्रीमान हैमल ने फ्रेंच भाषा के बारे में बोलना शुरू किया। उन्होंने बताया कि फ्रेंच भाषा दुनिया की सबसे बेहतरीन भाषा है, यह

सबसे ज़्यादा सुगठित, संगठित एवं स्पष्ट है। हमें इसे अपने बीच ज़िंदा रखना होगा एवं इसे कभी भूलना नहीं होगा क्योंकि जब आदमी गुलाम होता है तब उसके लिए उसकी गुलामी से आजादी की एक मात्र कुंजी, उसकी अपनी ज़बान होती है।... फिर उन्होंने व्याकरण लिया और हमें एक पाठ पढ़ाया। मैं यह देखकर हतप्रभ था कि इतनी आसानी से मैं कैसे समझ गया। उन्होंने जो कुछ मुझसे कहा मुझे बेहद सरल लगा। मुझे महसूस हुआ कि पहले कभी मैंने इतनी तन्मयता से उन्हें नहीं सुना और न ही उन्होंने पहले कभी इतने धैर्य के साथ हमें समझाया। कोई भी कह सकता है कि यह सज्जन आदमी आज जाने से पहले अपना समूचा ज्ञान जन्म-घुट्टी की तरह हमें एक ही झटके में पिला देना चाहता है।

पाठ समाप्त होने पर हमने लिखने का काम शुरू किया। उस दिन के लिए श्रीमान हैमल ने बिल्कुल नए शब्दों को तैयार किया था, उन्होंने बेहद सुंदर अक्षरों में लिखा फ्रांस, अलसास, फ्रांस, अलसास। ऐसा लग रहा था कि पूरे कक्ष में हमारे डेस्क के डंडे में ये शब्द झंडे की तरह लहरा रहे हैं। यह ध्यान देनेवाली बात थी कि हम पढ़ रहे थे और कक्ष में एकदम सन्नाटा पसरा था। हम केवल कागज पर कलम के घिसने की आवाज़ सुन सकते थे। तभी कुछ कोकचाफ़ कीड़े कक्ष में प्रवेश किये पर उस पर किसी ने ध्यान नहीं दिया, यहाँ तक कि उन छोटे बच्चों ने भी ध्यान नहीं दिया जो केवल लकीरें खींच रहे थे, वे इतनी तन्मयता एवं लगन से अपने काम में लगे थे जैसे लकीर भी फ्रेंच में खींच रहे हों। विद्यालय की छत पर बहुत हल्की आवाज़ में कबूतर गुटर गूं कर रहे थे और उन्हें सुनकर मैंने खुद से पूछा:

“क्या इन्हें भी जर्मन में गाने के लिए मजबूर किया जाएगा?”

कभी-कभी, मैं अपनी कॉपी से नज़र उठाता तो मुझे श्रीमान हैमल अपनी कुर्सी में स्तब्ध-स्थिर नज़र आते एवं उनकी नज़रें आस-पास की चीजों को अपलक देखती दिखतीं; ऐसा प्रतीत होता मानो वे अपनी नज़रों में स्कूल की हर चीज को क़ैद कर लेना चाहते हों।... सोचिए! पिछले चालीस वर्षों से, वे इसी जगह पर हैं; वही अहाता, वही

कक्ष, सबकुछ उनकी आँखों के सामने बिल्कुल उसी तरह से है। केवल बदले हैं- डेस्क एवं बेंच जो रगड़ने से घिस चुके हैं; अहाते का अखरोट जो अब काफ़ी लंबा हो गया है एवं हॉप की लताएँ जो अब खिड़कियों से लेकर छत तक की शोभा बढ़ा रही हैं। यह क्षण इस निःसहाय आदमी के लिए कितना कष्टकर एवं हृदय विदारक होगा जो अपनी चीजें छोड़ कर जा रहा है। उनकी बहन ऊपर के कमरे में आ-जा रही थीं और ट्रंक बंद करने की आवाज आ रही थी क्योंकि उन्हें हमेशा के लिए कल यह प्रांत छोड़ कर जाना था।

फिर भी, उनमें आखिर क्षण में भी हमें पढ़ाने का साहस था। सुलेख की कक्षा के बाद, हमने इतिहास का एक पाठ पढ़ा; तदोपरांत छोटे बच्चों ने एक साथ ककहरा का पाठ पढ़ा- बा बे बी बो ब्यु। कक्ष के अंतिम पंक्ति में बैठे वो वृद्ध हौसर अपना चश्मा पहने हुए थे और उनकी वर्णमाला की पुस्तक उनके हाथ में थी एवं बच्चों के साथ वे भी वर्णों का उच्चारण कर रहे थे। हम देख रहे थे कि वह किस तरह से इसमें भाग ले रहे थे; उनकी आवाज भावुकता की वजह से लड़खड़ा रही थी, यह सुनने में बड़ा ही हास्यास्पद लग रहा था और हमें इस पर रुलाई और हँसी दोनों आ रही थी। ओह! मुझे यह अंतिम कक्षा हमेशा याद रहेगी।...

अचानक चर्च की घड़ी ने बारह बजाये और फिर आंजेलस की प्रार्थना का समय हो गया। ठीक उसी क्षण, झिल से वापस लौट रहे जर्मन सैनिकों के ट्रंपेट की आवाज़ खिड़की से आने लगी।... श्रीमान हैमल अपनी कुर्सी से उठ खड़े हो गये और उनका चेहरा एकदम पीला पड़ गया था। इतने बड़े आज तक वे मुझे पहले कभी नहीं लगे।

“उन्होंने कहा- मेरे मित्रो, मेरे दोस्तो! मैं... मैं...”

पर उनका गला रूँध गया और वे कहते-कहते रुक गये। वे अपना वाक्य पूरा नहीं कर सके।

फिर वे एक खड़िया लेकर श्यामपट्ट की तरफ मुड़े और अपना सारा साहस बटोरकर पूरी शक्ति के साथ, वे जितना बड़ा लिख सकते थे उतने बड़े अक्षरों में लिखा :

“फ्रांस जिंदाबाद!”

फिर वे कुछ क्षण वहाँ रुके रहे, अपना सिर दीवार पर टिकाये, बिना कुछ बोले उन्होंने अपने हाथ से इशारा किया :

“बस हो गया... आप लोग जाइए।”



## बिलियर्ड्स का खेल

सैनिक काफ़ी थक चुके थे क्योंकि वे पिछले दो दिनों से लड़ रहे थे और उन्होंने पूरी रात पीठ पर बैग लिए मूसलाधार बारिश के बीच गुजारी थी। लेकिन पिछले तीन घंटे उनके लिए नरक के समान थे; वे अपने हथियार ज़मीन पर रखे हुए थे और राजमार्गों पर पड़ने वाले पोखरों एवं गीले मैदानों के कीचड़ों के बीच इंतज़ार कर रहे थे।

पिछली रातों की थकान से सभी झुक रहे थे, उनकी वर्दी भी भीगी हुई थी; एवं वे एक-दूसरे को सहारा एवं गर्मी देने के लिए परस्पर चिपके हुए थे। कुछ लोग खड़े-खड़े ही अपने बगल के लोगों के बैग पर सिर टिकाये सो रहे थे और उनके शिथिल-क्षुब्ध चेहरे पर एवं नींद से बोझिल आँखों में थकान एवं कष्ट साफ़ दिख रहा था। बादलों से घिरा काला आकाश, एक तरफ बारिश और कीचड़, न कोई आग की व्यवस्था और न ही सूप आदि का कोई इंतजाम, ऊपर से चारों ओर से शत्रुओं का भय। कितना मनहूस था यह...

वे वहाँ क्या कर रहे हैं? क्या हो रहा है?

तोपों का मुँह जंगल की तरफ ही है और वे बिल्कुल हमले के लिए तैनात-तैयार हैं पर वे आदेश का इंतज़ार कर रही हैं। झाड़ियों में रखी मशीनगनों भी एकटक अपने सीध में देख रही हैं। हर तरफ से आक्रमण करने की अच्छी तैयारी है। पर, वे हमला क्यों नहीं कर रहे हैं? वे किस चीज़ का इंतज़ार कर रहे हैं?

वे लोग आदेश की प्रतीक्षा कर रहे हैं और उन्हें मुख्यालय से अभी तक कोई आदेश नहीं मिला है।

हालाँकि मुख्यालय दूर नहीं है। वहाँ मसिफ़ पर्वतों के बीच सुंदर किला है जिसकी लाल ईंटें बारिश में धुलने से चमक रही हैं। यह सही अर्थों में राजशाही आवास और एक मार्शल के लिए एकदम उपयुक्त है। उसके पीछे एक गहरी खाई और एक ऊँची पत्थरों की बनी दीवार है जो उसे सड़क से अलग करती है, सीढ़ी तक एक समान हरी शार्दूल भूमि है जिसके किनारों पर फूलों की क्यारियाँ हैं। दूसरी ओर, महल के आंतरिक हिस्से में लतामंडप है जो बीच में काफी खुला और रौशन है, तालाब है जिसमें हंस तैरते हैं, यह एक विशाल दर्पण की भाँति किले को सुशोभित करता है और एक विशाल चिड़ियाघर के अंदर उस स्तूप की छत के नीचे उन पत्तों के ढेर से मोर अपनी कर्कश ध्वनि में चीख रहा है और सुनहरा तीतर अपने पंख फड़फड़ा रहा है और वे अपने पंख गोल करके फैला रहे हैं। अगर हाकिम लोग चले भी जाते हैं तो भी हम आत्मसमर्पण नहीं कर सकते; हम युद्ध को ऐसे ही जारी रखेंगे। थलसेना प्रमुख के झंडे तले घास के मैदान के छोटे-छोटे फूल भी सुरक्षित हैं और यह बहुत ही असाधारण बात है कि युद्ध के मैदान से इतने करीब जगह पर इतनी शांति, चीजों के सही क्रम में होने के कारण है तथा मसिफ़ और राजमार्ग के सही योजनागत प्रबंधन से है।

बारिश की वजह से सड़क गंदे कीचड़ से भर गया है और चक्कों के चलने से गहरे गड्ढे बन गए हैं। बरसात अब शीतल बौछार की तरह सुंदर एवं आभिजात नहीं रही जो ईंटों की लालिमा और लौन की हरियाली को पुनर्जीवित एवं संतरे के पत्तों और हंसों के उज्ज्वल पंखों को चमका दे। सब कुछ देदीप्यमान एवं शांत है। सचमुच, छत के शिखर पर फहराने वाले झंडे के अभाव और मुख्य द्वार पर दो सैनिकों की अनुपस्थिति के कारण इसे कोई भी मुख्यालय के रूप में विश्वास नहीं करेगा। घोड़े अस्तबल में आराम कर रहे हैं। यहाँ वहाँ अर्दली दिख रहे हैं, साईस लोग छोटे कपड़ों में रसोईघर के आस-पास आराम कर रहे हैं या फिर कुछ माली लाल रंग के पतलून में अपने पंजे चलाते हुए चुपचाप बाड़े की गुड़ाई कर रहे हैं।

सीढ़ियों की तरफ भोजन कक्ष की खिड़की खुलती है जिससे दिख रहा है कि खाने की मेज़ पर तश्तरियाँ पड़ी हैं, बोतल खुले पड़े हैं, गिलास गंदले, मैले एवं खाली हैं एवं

मेज़पोश पर भी सिलवटें हैं। भोज के बाद सभी सहभोजी जा चुके हैं। बगल के कमरों से हम ठहाकों की गूँज सुन सकते हैं, हँसी की अनुगूँज एवं बिलियर्ड्स के गेंद के लुढ़कने की आवाज़ एवं जाम से जाम टकराने की खनक सभी कुछ सुन सकते हैं... फ़्रील्ड-मार्शल अपने खेल में व्यस्त हैं और यही कारण है कि सेना आदेश की प्रतीक्षा कर रही है। जब फ़्रील्ड-मार्शल खेलते हैं तब जमीन गिरे या आसमान, कुछ भी; उस खेल में कोई दखल नहीं डाल सकता, खेल जरूर पूरा होता है।

बिलियर्ड्स! इस महान योद्धा की सबसे बड़ी कमजोरी है। वहाँ भोज, खेल और शराब की चहल-पहल होती। वह इसमें भी युद्ध के समान गंभीर, पूरे यूनिफ़ॉर्म में, सीने मेडल से भरे, चमकती हुई आँखें और उसके गाल चमक रहे होते हैं। उसके सहयोगी उसे चारों तरफ से घेरे हुए उत्साहित, आदर के साथ, उसके हर-एक शॉट पर वाह-वाह करते नहीं थकते। जब फ़्रील्ड-मार्शल कोई अंक अर्जित करता तो सभी अंक-तालिका के तरफ बढ़ते और अगर उसे प्यास लगती तो सभी चाहते कि वे उसका जाम तैयार करें। इस बड़े-से बलूत की लकड़ी की कारीगरी से सजे कमरे में उनकी कलगी और तमगे आपस में टकरा रहे हैं, उनके अलंकरण और मेडल की खनक गूँज रही है, सबके होठों पे प्यारी-सी मुस्कान है, नौकरों का वो दरबारी दंडवत करना, इतनी सारी नयी वर्दियाँ और उन पर की गई कढ़ाई, यह एक कमरा पार्क में खुलता है और इसके दूसरी तरफ सुंदर आँगन है, इन सबको देखकर कॉपिऐन्य के पतझड़ की याद आ जाती है; और वहाँ मिट्टी में लेटे-लेटे उनकी टोपियाँ सड़ रही हैं, बारिश सड़कों के किनारे उनके समूह को और अधिक विषादपूर्ण बना रही है।

मार्शल का प्रतिद्वंद्वी उसी के बटालियन का एक नौजवान कैप्टन है जिसके चुस्त शरीर, घुँघराले बाल और उसके हाथों में हल्के दस्ताने हैं। वह बिलियर्ड्स का बहुत बड़ा खिलाड़ी है और उसमें दुनिया के सारे मार्शलों को हराने की क्षमता है लेकिन वह अपने रिपोर्टिंग अफ़सर से एक सम्मानजनक दूरी बनाए रखना जानता है; वह कोशिश करता है कि वह नहीं जीते और साथ ही वह आसानी से हारना भी नहीं चाहता है। और इसीलिए सभी उसे बहुत ही जहनी और भविष्य का बहुत बड़ा अफ़सर कहते हैं।

सावधान, नौजवान आदमी, तुम्हें सावधान होने की जरूरत है। मार्शल के पंद्रह अंक और तुम्हारे सिर्फ दस हैं। अगर तुमने इसी तरह से खेल को आखिर तक बनाए रखा तो तुम अपनी तरक्की के लिए आवश्यकता से अधिक काम कर दोगे और अगर तुम औरों के साथ इस मूसलाधार बारिश में बाहर होते जहाँ क्षितिज तक पानी-ही-पानी नज़र आ रहा है तो व्यर्थ में कभी न आने वाले आदेश के इंतज़ार में तुम्हारी यह सुंदर यूनिफ़ॉर्म गंदी होती और तुम्हारे ये सोने के मेडल की चमक धुँधली पड़ जाती।

यह खेल निस्संदेह दिलचस्प है। गेंदें डगरती हैं फिर एक दूसरे को स्पर्श कर आपस में रंग बदल लेती हैं। पट्टियाँ गेंद को वापस धकेलने में सहायक होती हैं तथा गलीच इसे गरम रखता है...

अचानक आकाश में तोप के गोले की लौ दिखाई देती है। एक धमाका खिड़कियों को हिला कर रख देता है। सभी लोग काँप उठते हैं और एक-दूसरे को चिंतित नज़रों से देखते हैं। केवल मार्शल ही है जिसे न कुछ दिखा और न ही कुछ सुनाई दिया : वह बिलियर्ड्स पर झुका हुआ एक अद्भुत डॉ-शॉट लेने की तैयारी में है; यह डॉ-शॉट ही उसकी सबसे बड़ी ताकत है।...

लेकिन ये क्या... फिर एक विस्फोट और पुनः दूसरा। तोप के गोले एक के बाद एक गिरते हैं और फिर उनकी बारिश होने लगती है। सहायक सैनिक अधिकारी खिड़कियों की तरफ लपकते हैं। लगता है प्रूसियन हमला कर दिये हैं ?

“ठीक है, करने दो उन्हें आक्रमण!”- मार्शल ने कुछ सफ़ेद गेंदें रखते हुए कहा... “अब तुम्हारी बारी है, कैप्टन!”

सभी कर्मी विस्मय से काँप उठते हैं। बंदूक गाड़ी में सोया तुरैन् भी इस मार्शल के सामने कुछ नहीं है, जो कार्रवाई करने के समय इतने तल्लीन होकर बिलियर्ड्स खेल रहा है।... इसी बीच शोर दो गुना बढ़ जाता है। तोप के गोलों के झटकों के साथ मशीनगन की तड़तड़ और बंदूक चलने की खड़खड़ मिली-जुली आवाज़ सुनाई दे रही है। लॉन में दूर किनारे से लाल एवं काली धुंध उठ रही है। पूरे पार्क में आग की लपटें उठ रही हैं। आतंकित मोर और तीतर अपने दरबों

से चिघाड़ रहे हैं; अरबी घोड़े पाउडर की गंध सूँघकर अस्तबल में पीछे हट जाते हैं। मुख्यालय में भगदड़ मच जाती है। तार पर तार आता है। आपातकालीन संदेश पूरी रफ़्तार से पहुँच रहे हैं। सभी लोग मार्शल को खोज रहे हैं।

मार्शल को खोजा नहीं जा सकता, अभी वह पहुँच के बाहर है। मैंने आपसे कहा था न कि जब वह एक बार खेल शुरू करता है तो फिर उसके खत्म होने तक कोई शक्ति उसे डिगा नहीं सकती।

“तुम्हारा शॉट है, कैप्टन!”

लेकिन कैप्टन घबरा जाता है। नौजवान होने के कारण ऐसा होता जाता है! इसीलिए, उसका ध्यान हट जाता है और वह एक के बाद एक दो शॉट खेल जाता है जो उसे उस खेल में लगभग जीत के करीब ला देता है। यह देखकर मार्शल आग बबूला हो उठता है। आश्चर्य-आक्रोश उसके चेहरे पर साफ-साफ झलक रहा है। ठीक उसी समय, एक घोड़ा सरपट दौड़ते हुए ऑगन में पहुँच जाता है और गिरकर लोटने लगता है। और तभी कीचड़ में सना एक सहायक सैनिक अधिकारी उसके आदेश की अवहेलना करते हुए सीढ़ियों तक फ़र्लाँग भरते हुए पहुँच जाता है : “मार्शल! मार्शल!..” आप देख सकते हैं वह किस तरह से मार्शल का अभिवादन करता है।... मार्शल तैश में आ जाता है और उसका मुँह क्रोध से लाल हो जाता है, वह बिलियर्ड्स की छड़ी हाथ में लिये खिड़की पर आता है :

“क्या हुआ ?... ये सब क्या है ?... क्या कोई संतरी नहीं है यहाँ ?

- पर, मार्शल...

- ठीक है... जल्द मिलते हैं... मेरे आदेश की प्रतीक्षा करें, बेड़ा गरक हो सबका...!”

और एक ज़ोर के झटके के साथ खिड़की बंद कर देता है।

वे उसके आदेश का इंतज़ार कर रहे हैं! बेचारे बदनसीब लोग, अभी तक प्रतीक्षा ही कर रहे हैं। हवा उनकी तरफ़ बारिश को ढकेल रही है और साथ ही गोलियाँ उनके पूरे शरीर को छलनी कर रही हैं। कई पूरी की पूरी बटालियन

शिकस्त खा चुकी है, रौंदी जा चुकी है जबकि दूसरी बटालियन पूरी तरह से हथियारों से लैस यूँ ही हाथ पर हाथ रखे बेकार पड़ी हुई है; वे अपने अकर्मण्यता-विवशता-लाचारी को समझने में असमर्थ हैं। कुछ नहीं किया जा सकता। सभी हुक्म का इंतज़ार कर रहे हैं... बहरहाल, उन्हें मरने के लिए किसी के आज्ञा की आवश्यकता नहीं है, लोग उस विशाल नीरव-निःशब्द-मौन किले के सामने झड़ियों के पीछे और खड्डों में गिर रहे हैं। गिरने के बाद भी गोलियाँ उन्हें बख्शा नहीं रही हैं बल्कि उन्हें और भेद रही हैं, और उनके खुले घावों से फ्रांस का महान रक्त बे-आवाज़ बहे जा रहा है... ऊपर कमरे में, जहाँ बिलियर्ड्स हो रहा है, वहाँ माहौल बिलकुल गरम है : मार्शल ने फिर से अपनी बढ़त बना ली है; लेकिन नन्हा कैप्टन भी बखूबी शेर की भाँति बचाव कर रहा है...

सत्रह! अठारह! उन्नीस!...

उन्हें अंक दर्ज करने का भी समय नहीं मिलता। युद्ध का शोर करीब आ गया है। मार्शल को जीतने के लिए एक और अंक की जरूरत है। बाग में पहले से ही गोले गिर रहे हैं। अचानक तालाब के ऊपर एक गोला आ फटता है। शीशा टूटकर चकनाचूर हो जाता है; एक डरा हुआ हंस खून से सने पंखों के बवंडर में तैर रहा है। और ये रहा आखिरी शॉट...

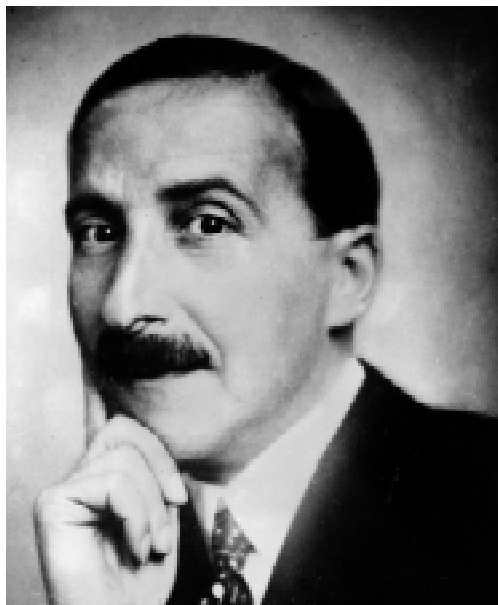
अब, हाते में बारिश के गिरने की आवाज़, पहाड़ी की ढाल पर भ्रमित गाड़ियों की गड़गड़, और जलाक्रांत रास्तों पर सैनिकों के झुंड- जो बहुत हड़बड़ी में हैं- की पद चाप-ध्वनि को छोड़कर, चारों ओर एक विशाल-विस्तीर्ण सन्नाटा पसरा हुआ है। सेना की घोर पराजय होती है। मार्शल अपना दाँव जीत जाता है।

---

1987 में जन्मे श्रीनिकेत मिश्र काशी हिंदू विश्वविद्यालय से पी-एच.डी. हैं। भारत में फ्रेंच की संभावनाओं को तलाशने कुछ समय पेरिस में रहे। कुछ समय बी.आई.टी। मेसरा, राँची में पढ़ाने के बाद, कुछ वर्षों तक महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा में फ्रेंच एवं हिंदी का अध्यापन कार्य किया। इन दिनों जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, नई दिल्ली में पोस्ट डॉक्टोरल फ़ेलो हैं। कहानियों और नाटकों में गहरी रुचि। प्रसिद्ध फ्रेंच नाटक एंटीगनी का हिंदी में अनुवाद भी किया है।



जर्मन कहानी



स्टीफन ज़्विग

लेपोरैला

अंग्रेजी से अनुवाद : अनुराधा महेन्द्र

जन्म 1881 में। पहली पुस्तक 'सिल्वर्न सेटन'। काव्य के साथ आपने उपन्यास भी लिखे। नीत्से, बाल्ज़ाक, तोलस्तोय की जीवनियाँ बहुत लोकप्रिय हुईं। 'द वर्ल्ड ऑफ़ यसटडे' आत्मकथा। 1942 में मृत्यु।

क्रैसेंज अन्ना फिंकेनहूबर की उम्र उनतालीस बरस थी। उसका जन्म नाजायज़ संतान के रूप में एक पहाड़ी गाँव में हुआ था। यह जगह इसब्रुक से ज़्यादा दूर नहीं थी। उसकी नौकरानी के परिचय-पत्र में ख़ास विशेषता के ख़ाने में एक लक़ीर खींच दी गई थी जिसका मतलब था कोई 'ख़ास विशेषता नहीं' पर इस क्रिस्म के कागज़ात भरने वाले अफसरों को यदि उसके लक्षणों को दर्ज़ करना ही पड़ता तो इस ख़ाने में वे यक़ीनन लिखते, "थके-मांदे, हठीले, मरियल पहाड़ी टट्टू की माफ़िक।" वाकई नीचे का थुलथुल होंठ, लंबी अंडाकार भूरी मुखाकृति, बिना बरौनियों की बुझी-बुझी आँखें, और सबसे बढ़कर तेल से माथे पर चिपकाए रूखे बालों की वजह से उसे देख खच्चर की ही छवि ज़ेहन में उभरती थी। खच्चर की भांति उसकी चाल भी अड़ियल और अनमनी थी। कुदरत का एक ऐसा दुखी प्राणी जिसे बारह मास सर्दी हो या गर्मी लकड़ी की भारी-भरकम गट्ठर लादे उसी ऊबड़-खाबड़, पथरीले या दलदली रास्ते से ऊपर-नीचे आना-जाना पड़ता है। दिनभर की कड़ी मेहनत से छुट्टी पाकर क्रैसेंज भी अपनी कठोर उंगलियों को बांध बड़े फूहड़ ढंग से कुहनियाँ फैलाकर पसर जाती और ऊँघने लगती थी। ऐसे वक़्त उसमें उन खच्चरों से अलग

बुद्धिमानी का कोई लक्षण दिखाई नहीं देता था, जो दिनभर की मेहनत के बाद बड़े धीरज से अस्तबल में मूक खड़े रहते हैं। उसका समूचा रंग-ढंग कठोर, काठ-सा बेजान और जड़ था। सोच-विचार उसके बूते से बाहर की बात थी। कोई भी नया विचार उसके दिमाग में बमुश्किल ही घुसता, लगता जैसे विचार को छलनी के बंद सुराखों से गुज़रकर आना पड़ा हो पर एक बार घुस जाए तो उसे यूँ पकड़कर रखती जैसे कंजूस कौड़ी को। वह पढ़ती-वढ़ती कुछ नहीं थी अखबार या इबादत-पुस्तिका तक नहीं। लिखना उसके लिए टेढ़ी खीर था। बाज़ार के हिसाब-किताब की डायरी में भद्दी और टेढ़ी-मेढ़ी लिखावट उसकी भौंडी और दुबली-पतली आकृति की ही याद दिलाती, जिसमें नारी-सुलभ आकर्षण का कोई चिह्न नहीं था। उसकी सख्त हड्डियों, माथे, कूल्हों और उंगलियों के जोड़ों की तरह ही उसकी आवाज़ भी भारी-भरकम थी जो कंठ के भीतर से ठेठ तिरौली उच्चारण के बावजूद यूँ खड़खड़ाती जैसे जंग लगे फाटक की चूल्हें। उसकी आवाज़ में जंग लगना कोई अचरज की बात नहीं थी। वह कभी एक भी लफ़्ज़ ज़रूरत से ज़्यादा नहीं बोलती थी। किसी ने उसे कभी हँसते हुए नहीं देखा था। इस मामले में भी वह ढेर-डंगरों से मेल खाती थी, क्योंकि इन 'मूक-पशुओं' का बोलने से वंचित रहने से भी दुःखद होता है 'हँसी' से वंचित रहना, जिसकी मार्फत भावनाओं का उन्मुक्त और आह्लादित होकर इज़हार किया जा सकता है।

नाजायज़ संतान होने की वजह से उसका पालन-पोषण कम्युनिटी ने किया था। बाहर बरस की उम्र में ही उसे एक रेस्त्रां में काम करने के लिए भेज दिया गया था। वहाँ दिन-रात कड़ी मेहनत से उसने अच्छा नाम कमा लिया इसलिए उसे मुख्य सड़क पर स्थित एक बेहतर होटल में रसोई के काम के लिए भेज दिया गया। क्रैसैंज सवेरे पाँच बजे उठ जाती और झाड़ू-पोछा, कमरों की साफ़-सफ़ाई, अंगीठी, जलाना, खाना पकाना, कपड़े-लत्ते धोना, इस्त्री करना, आदि तमाम कामों में देर रात तक जुटी रहती। बाहर जाने या सैर-सपाटे के लिए कभी छुट्टी नहीं माँगती थी। गली-मुहल्ले में भी नहीं जाती। चर्च जाती और फौरन लौट आती। रसोई की आग ही उसका सूरज थी। जंगल से उसका एक मात्र वास्ता अंगीठी के लिए ढेर सारी लकड़ियाँ बीनकर लाना था।

कोई पुरुष उसके आस-पास नहीं फटकता था, वह शायद इसलिए कि जैसा पहले ही बताया गया है कि रोबोट की तरह गुज़ारे पच्चीस बरसों ने, जो थोड़ी-बहुत नारी-सुलभ सुंदरता कुदरत ने बख़्शी थी, उसे पूरी तरह निचोड़ लिया था। कभी कोई उन नज़रों से उसे देखता भी तो वह घोर प्रतिरोध करती। हाँ, एक चीज़ से उसे असीम सुख मिलता था— वह था पैसा जमा करना! देहातियों की-सी जमाखोरी प्रवृत्ति उसमें भी थी; दूसरे इस ख़याल मात्र से वह सिहर उठती कि बूढ़ी होने पर उसे दोबारा कम्युनिटी पर निर्भर रहने के लिए लाचार न होना पड़े। दूसरों की दान-दया पर वह नहीं जीना चाहती थी। धन कमाने की यह लालसा ही इस नीरस जीव को, जब वह सैंतीस बरस की थी तो अपनी तिरौली जन्मभूमि से बाहर ले आई थी। रोज़गार दफ़्तर की मैनेजर साहिबा गर्मियों की छुट्टियों में तिरौल आई थीं।

क्रैसैंज की जी-तोड़ मेहनत और काम के प्रति उन्माद देखकर वह चकित थीं उसने क्रैसैंज से कहा कि इतनी मेहनत से तो वह वियना में दुगनी कमाई कर सकती है।

रेल के सफ़र में क्रैसैंज हमेशा की तरह ख़ामोश रही। अखंड चुप्पी धारण किए उसने अपने खपची के बक्से को अपनी गोद में ही रख लिया जिसमें उसने ज़रूरत का सारा सामान ठूस रखा था, उसके बोझ से हालांकि उसके घुटने दर्द करने लगे थे पर मज़ाल है कि वह उसे नीचे उतारती। कुछ अच्छे व भलेमानस मुसाफ़िरों ने बक्से को रैक में रखने की पेशकश भी की, पर इस हठी स्त्री ने तुरंत इंकार कर दिया। उसके देहाती दिमाग में यह बात घर कर गई थी कि जिस बड़े शहर वह जा रही है वहाँ ठगी और चोरी-चकारी बहुत आम बात है। वियना पहुँचकर अकेले बाज़ार आने-जाने में उसे कुछ दिन लगे, क्योंकि पहले-पहल तो ट्रैफिक देखकर उसका कलेजा मुँह को आ जाता था। पर एक बारगी जब वह उन चार सड़कों से भली-भाँति वाकिफ़ हो गई जहाँ उसे रोज़ आना-जाना पड़ता था, तो खुद-ब-खुद बड़े मज़े से बांह में टोकरी उठाएँ रोज़ बाज़ार आने-जाने लगी। इस नई जगह पर भी वह पहले की ही तरह झाड़ू-पोछा, कमरों की साफ़-सफ़ाई, अंगीठी जलाना आदि काम करती थी। तिरौल में रात नौ बजे ही लोग सोने चले जाते हैं। उसी रिवाज़ के मुताबिक वह नौ बजे सो जाती और सुबह पुकारे जाने तक पशुओं की तरह पूरा मुँह खोलकर बेसुध पड़ी

रहती। किसी के लिए भी यह कहना वाकई मुश्किल था कि यह नई जगह उसे पसंद थी या नहीं, शायद वह खुद भी नहीं जानती थी। उसकी एकांतता जस-की-तस थी। हर हुक्म की तामील वह बस एक शब्द 'अच्छा' कहकर करती। कभी जब चिड़चिड़े मूड में होती तो कंधे उचका देती। अपने साथी नौकरों को नज़रअंदाज़ करती। चिढ़ाने या उसकी खिल्ली उड़ाने की उनकी किसी भी हरकत पर कोई ध्यान नहीं देती थी। महज़ एक मर्तबा एक खुशमिजाज़ वियनाई नौकरानी जब उसके ख़ास तिरौली लहजे की नकल करते हुए लगातार खिल्ली उड़ती रही तो वह आपा खो बैठी। गुस्से से उसने चूल्हे से एक जलती लकड़ी उठाई और इस ख़तरनाक हथियार को लहराते हुए तंग करने वाली उस लड़की के पीछे लपकी जो भय और विस्मय से चीखती हुई भाग गई। उसके बाद कभी किसी ने उसे छेड़ने की हिम्मत नहीं की।

हर इतवार सुबह-सवेरे बड़े घेरे वाला स्कर्ट और तिरौली टोपा पहनकर वह गिरजाघर जाती थीं। उसे एक दिन की छुट्टी मिलती थी। पर सिर्फ़ एक बार उसने वियना में घूमने की कोशिश की। ट्राम न पकड़कर वह पैदल ही वियना की सड़कों पर निकल पड़ी। घुमावदार सड़कों पर भटकते-भटकते आख़िरकार डेन्यूब नदी के किनारे आ पहुंची। नदी के तेज़ बहाव को वह यूँ घूरती रही मानो वह उसकी घनिष्ठ मित्र हो। फिर वह पलटी और भीड़-भाड़ वाली सड़कों से बचती-बचाती लौट आई। अपनी इस पहली सैर से उसे निराशा ही हुई होगी क्योंकि उसने इसे कभी नहीं दोहराया। इतवार की छुट्टी के दिन बुनाई-कढ़ाई करना या फिर खिड़की के पास निठल्ले बैठे रहना उसे भाता था। इस तरह शहर आने के बावजूद उसकी एकरस ज़िंदगी में कोई ख़ास बदलाव नहीं आया, सिवाय इसके कि माह के अंत में अब दो की बजाय चार नीले नोट उसके मेहनतकश, थके और सख़्त हाथों में आ जाते थे। इन नोटों को देर तक वह संशय से जाँचती-परखती। हरेक को सलीके से तहकर दूसरे नोटों के साथ काठ के नक्काशीदार पीले बक्से में सहेजकर रखती, जिसे वह गाँव से लेकर आई थी। इस छोटे से बहुमूल्य संदूक से उसकी ज़िंदगी का गहन मक़सद जुड़ा था। रात में वह चाबी हमेशा तकिए के नीचे दबाकर रखती। दिन के वक़्त चाबी कहाँ रहती है इसकी घर में किसी को भी ख़बर नहीं थी।

इस अज़ीबोगरीब मानव (हालांकि उसमें मानवीय गुण नहीं के बराबर थे फिर भी मानव तो कहना पड़ेगा) की कुल मिलाकर यही विशेषताएँ थीं। सामान्य क्रिस्म की कोई भी स्त्री शायद ही नौजवान बैरन वॉन लेडरशीम के उस विचित्र घर में नौकरानी के रूप में इतने दिन टिक पाती। घर में आए दिन होने वाले लड़ाई-झगड़ों के कारण नौकर एकाध दिन में ही काम छोड़ भाग जाते थे। मालकिन की तीखी डांट-फटकार को बर्दाश्त करना उनके बस की बात नहीं थी। वह एक बेहद अमीर व्यापारी की सबसे बड़ी बेटी थी। बैरन के साथ उसकी पहली मुलाक़ात एक पहाड़ी रिसार्ट में हुई थी। हालांकि वह उससे कई बरस छोटा था, किसी बड़े अमीर परिवार से भी नहीं था और गले तक कर्ज़ में डूबा था पर बेहद मिलनसार व ख़ूबसूरत था जिसे दौलत के साथ ब्याह रचाने में कोई परहेज़ न था। लड़की के माँ-बाप के भरसक विरोध के बावजूद दोनों ने सब कुछ तुरत-फुरत तय कर लिया। लड़की के माता-पिता दरअसल ऐसा वर चाहते थे जो बैरन वॉन लेडरशीम के मुकाबले ज़्यादा साधन-संपन्न हो। हनीमून पूरा होने से पहले ही श्रीमती वॉन लेडरशीम को लगने लगा कि उसके माता-पिता ही ठीक थे। उसका युवा पति घर की जिम्मेदारियाँ निभाने से ज़्यादा एय्याशी करने में मगन रहना चाहता था। कर्ज़ में वह किस कदर डूबा है इसका भी उसने कभी खुलासा नहीं किया।

यूँ वह अच्छे स्वभाव का था और इस क्रिस्म के रसिकों की तरह एक दिलकश साथी की सभी खूबियाँ उसमें थीं पर उसका कोई उसूल नहीं था। ख़र्च पर अंकुश रखना या हिसाब-किताब करना उसे ज़ाहिल क्रिस्म के पूर्वाग्रह की उपज लगता था। विवाह के बाद भी वह पहले की ही तरह फाकामस्त, उड़ाऊ बना रहना चाहता था। बीवी एक व्यवस्थित सुखी घरेलू जीवन चाहती थी जिसकी वह अपने माँ-बाप के घर में आदी थी। बीवी का यह मध्यवर्गीय बर्ताव उसके विलासपूर्ण मिज़ाज को खटकता था। हालांकि वह अमीर थी पर पैसों को यूँ उड़ाने नहीं देना चाहती थी। उसने घुड़साल बनाने और घुड़दौड़ के लिए घोड़े ख़रीदने की उसकी पसंदीदा योजना पर रुपए लगाने से साफ़ इंकार कर दिया। उसकी इस कंज़ूसी के जवाब में पति लेडरशीम ने पति-पत्नी सम्बन्धों को दरकिनार कर अपनी इस उत्तरी जर्मन बीवी की उपेक्षा करना शुरू कर दिया। बीवी की तीखी आवाज़ और मनमाने बर्ताव से उसकी चिढ़ दिनों दिन

बढ़ती गई। ज़ाहिर तौर पर वह उसे कोई चोट नहीं पहुँचाता था पर दिन-रात वह पत्नी की उपेक्षा करता जिससे वह घोर निराशा से भर उठती। जब भी वह अपना दुखड़ा रोने या समझाने के लिए पति के पास जाती, वह पूरे अदब और सहानुभूति से उसकी बात सुनता पर उसके पलटते ही उसकी बातों को सिगरेट के धुएँ की तरह लापरवाही से उड़ा देता था। उसका यह बनावटी बर्ताव उसके खुले विरोध से कहीं ज़्यादा यातनादायी था। चूँकि पति की अचूक भलमनसाहत के आगे वह निरस्त्र हो जाती थी इसलिए उसके भीतर दबा हुआ क्रोध दूसरे तरीकों से अभिव्यक्त होता था। उसके कहर की सबसे ज़्यादा वजह-बेवजह मार झेलनी पड़ती नौकरों को। दो बरसों से भी कम अरसे में 16 नौकर बदले जा चुके थे। एक मर्तबा तो उसने इस कदर मार-पिटायी कर दी कि मुकदमेबाज़ी और बदनामी से बचने के लिए ख़ासी रक़म चुकानी पड़ी।

क्रेसेंज ही एकमात्र ऐसी नौकरानी थी जो चुपचाप उसकी डांट-फटकार सह लेती थी और मालकिन की गालियों की बौछार को झेलते हुए यूँ मूक खड़ी रहती जैसे बारिश में भीगते हुए घोड़े खड़े रहते हैं। कभी किसी की तरफ़दारी नहीं करती थी। आए दिन नौकरों के बदल जाने का उस पर रती भर भी असर नहीं पड़ता था। दरअसल इस बात पर उसका ध्यान ही नहीं जाता था कि साथ में रहने वाले नौकरों के नाम, सूरत-शक्ल और काम लगातार बदलते रहते हैं, क्योंकि दिन का वक़्त वह साथी नौकरों के साथ कभी नहीं गुज़ारती थी। दरवाज़ों के जोर से भिड़ने, खाने के वक़्त की खुसर-पुसर और अपनी मालकिन के बेहोशी भरे दौड़ों और वहशी चीख-पुकार के प्रति वह पूरी तरह उदासीन ही बनी रहती। रोज़ बाज़ार जाकर सामान लाना और रसोई में जुटे रहना, इस दिनभर की मेहनत को छोड़ बाहर क्या चल रहा है इससे उसका कोई वास्ता नहीं था। मूसल की तरह सख़्त और भावशून्य रोज़-ब-रोज़ वह पिसती रहती। इसी तरह इस विराट शहर में उसके जीवन के दो बरस गुज़र गए पर उसकी मानसिकता में रतीभर भी बदलाव नहीं आया। हाँ, भौतिक चीज़ों के लिहाज़ से एकमात्र फ़र्क़ यह आया कि अब उसके बक्से में नीले नोटों की गड़्डी एक इंच मोटी हो गई थी। जब दूसरे बरस के आखिर में उसने (उंगली पर थूक लगा-लगाकर) गिनती की तो पाया कि एक हज़ार

रुपया जमा करने के अपने मक़सद के वह बहुत करीब पहुँच चुकी थी।

पर भाग्य की महिमा निराली है और कभी-कभार संयोग ऐसा खेल खेलता है कि सख़्त से सख़्त स्वभाव में अजीबोगरीब बदलाव आ जाता है। क्रेसेंज में आए बदलाव की वजह भी उतनी ही मामूली थी जितनी वह खुद! हर दस बरस बाद सरकार नए सिरे से जनगणना करती थी, जिसके लिए हर घर को एक जटिल-सा दस्तावेज़ भरकर देना पड़ता था। बैरन बख़ूबी जानता था उसके ज़्यादातर नौकर-चाकर लिखने के मामले में एकदम पैदल हैं। सो उसने सबके फ़ार्म खुद ही भरना मुनासिब समझा। इसी बाबत् सही वक़्त पर उसकी मेज़ पर क्रेसेंज को भी बुलाया गया। जब उसका नाम, उम्र और जन्मस्थान पूछा गया तो पहली और तीसरी मद के बारे में जानकर घर के मालिक की अचानक दिलचस्पी बढ़ गई। एक उम्दा शिकारी होने के नाते बैरन अक्सर अपने कॉलेज के मित्र के साथ रहने चला जाता था, जो तिरौल के शिकारगाह का मालिक था। एक मर्तबा तो सांभर की खोज में पंद्रह दिनों तक वह पहाड़ों में भटकता रहा। साथ में फिंकेनहूबर नाम का गाइड था जो संयोगवश क्रेसेंज का चाचा निकला। लेडरशीम को वह शख्स अच्छा लगा था। इस घटना और रसोईदारिन के जन्मस्थान की जानकारी होने की वजह से मालिक और नौकरानी के बीच बातचीत चल पड़ी। बातों ही बातों में पता चला कि जिस सराय में क्रेसेंज ने पहले काम किया था वहाँ लेडरशीम क्रेसेंज के हाथों से पका बेहद लजीज़ गोश्त खा चुका था। बेशक बेहद मामूली पर एक के बाद जिस तरह से संयोग जुड़ते गए वह क्रेसेंज के लिए वाकई असाधारण था। पहली बार वियना में उसका एक ऐसे व्यक्ति के साथ साबका हुआ था जो उसके घर और गाँव से वाकिफ़ था। वाकई कितनी अद्भुत बात थी। एक अनोखे उत्साह से उसका चेहरा दमकने लगा। गर्दन व शरीर झुकाकर बड़े फूहड़ ढंग से वह बैरन के पास खड़ी थी। जब बैरन ने मज़ाक करते हुए तिरौली लहजे में पूछा कि क्या वह गाना-वाना भी जानती है तो उसका दिल गुदगुदाने लगा। फिर इसी हँसी-मज़ाक के मूड में बैरन ने उसकी पीठ थपथपाते हुए कहा, “मेरी प्यारी सेंजी अब तुम जाओ, मुझे काम करना है, पर ये दो अतिरिक्त क्राउन लेती जाओ, क्योंकि तुम जिलटराल की रहने वाली हो।”

हालांकि मालिक ने कोई गहरी अंतरंगता नहीं दर्शाई थी। ऐसा तो कतई नहीं कि एक अधेड़ नौकरानी का दिल भीतर तक मचलने लगे पर उन चंद मिनटों की बातचीत का उसके नीरस और कोरे मन पर कुछ वैसा ही असर हुआ जैसा किसी शांत, स्थिर तालाब में कंकड़ फेंकने से होता है। गोलाकार लहरें उठीं और धीरे-धीरे फैलकर छपछपाते हुए उसकी चेतना में घर कर गईं। सालों-साल इस चुप्पे क्रिस्म के जीव का अपने किसी भी साथी के संग कभी कोई निजी संबंध नहीं रहा था। उसके लिए वाकई यह अकल्पनीय था कि इमारतों के इस जंगल में रहने वाले सैकड़ों-हज़ारों लोगों में से पहली बार उसमें दोस्ताना दिलचस्पी दिखानेवाला एक ऐसा शख्स है, जो उसके गाँव के पहाड़ों से वाकिफ़ है और जिसने उसके हाथों से पका गोश्त खाया है। इस सबसे ज़्यादा रोमांचक थी पीठ पर पड़ी वह थपकी-जो उसके देहाती मन के मुताबिक उसके भीतर की नारी को जगाने का एक अर्थपूर्ण न्यौता था। हालांकि क्रेसेंज में उतना दुःसाहस नहीं था कि यह भरम पाल बैठे कि इस कदर शानदार पोशाकवाला खूबसूरत नौजवान उसकी कुम्हलाई, थकी देह के प्रति आकर्षित हो सकता है, फिर भी इस रू-ब-रू जान-पहचान ने उसकी सुप्त चेतना को झकझोर दिया था।

भला हो उस मुलाकात का जिसकी बदौलत उस स्त्री के अंतर्मन में तब्दीली आने लगी, शुरुआत में हालांकि यह अदृश्य थी पर हौले-हौले यह निश्चित आकार लेने लगी और फिर एक नई भावना में बदल गई। एक ऐसी भावना जो स्वामिभक्त कुत्ते में देखी जाती है जो अपने आस-पास के अनगिनत लोगों में से किसी एक को चुनकर उसे ही अपना स्वामी बल्कि देवता समझने लगता है। इस भावना के वशीभूत कुत्ता हर वक्त अपने स्वामी के पीछे लगा रहता है और कुछ दिनों की जुदाई के बाद मिलने पर उछलने और पूंछ हिलाकर खुशी का इज़हार करने लगता है। दास की-सी प्रवृत्ति के चलते उसके हर हुक्म का पालन करता है। क्रेसेंज के दिमाग़ के तंग खानों में जिसमें आज तक पैसा, बाज़ार, अंगीठी, गिरजाघर और बिस्तर जैसे महज़ आधा दर्जन ख़याल ही हावी रहते थे, अब अचानक उसमें एक नया अंकुर फूट पड़ा था, जो अपने लिए जगह चाहता था और उसने दूसरे तमाम कब्ज़ेदारों को परे धकेल दिया। पकड़ में आई किसी चीज़ को हर देहाती छोड़ने से हिचकिचाता है, यह देहातिन

स्त्री भी अपने सुप्त आवेगों की विस्मय भरी दुनिया में इस नए अंकुर का पूरी मेहनत से पोषण करने लगी। उसमें आई इस तब्दीली को जग-ज़ाहिर होने में कुछ वक्त लगा, उसके बदलाव के शुरुआती संकेत धुंधले थे, पर फिर उसकी आदतों में आई तब्दीली साफ़ दिखने लगी। मसलन वह बैरन के कपड़ों और जूतों को बड़े जतन और सावधानी से साफ़ करती जबकि मालकिन के कपड़ों और जूतों की साफ़-सफ़ाई दूसरी नौकरानी पर छोड़ देती। बैरन के ताले में चाबी घुमाने की आवाज़ सुनते ही तेज़ी से भागकर हॉल में आती और झटपट टोप, कोट और छड़ी उसके हाथ से ले लेती ताकि वह आराम कर सके। रसोई में भी अब वह पहले से कहीं ज़्यादा मेहनत से काम करती। कभी-कभार तो सांभर के गोश्त के लिए कई-कई बार बाज़ार के चक्कर काटती। अब वह अपने कपड़ों पर भी ध्यान देने लगी थी।

एक-दो हफ़्ते गुज़रने के बाद उसकी नई भावनाओं के अंकुर में पत्तियां उगकर ज़मीन से ऊपर दिखाई देने लगीं। कुछ और हफ़्ते गुज़रने के बाद पत्तियों की दूसरी खेप फूटने लगी और उनके रंग भी निखरने लगे। यह दूसरी भावना पहली की पूरक थी यानी एक ओर मालिक के प्रति अटूट श्रद्धा और दूसरी ओर मालकिन के प्रति असीम नफ़रत। उसकी बीबी के लिए नफ़रत जो बैरन के साथ रह सकती थी, सो सकती थी, चाहे जब बात कर सकती थी, जबकि इस सबके बावजूद वह मालिक के साथ उस तरह आदर से पेश नहीं आती थी जिस तरह वह खुद यानी सेंजी। इसकी एक वजह यह थी (अब उसने ध्यान देना सीख लिया था) एक मर्तबा वह यह देखकर दंग रह गई कि गुस्से से आगबबूला होकर पत्नी अपने पति को बड़ी बेरहमी से लताड़ रही थी। दूसरी बात यह कि पति-पत्नी के स्वभाव में ज़मीन-आसमान का जो फ़र्क़ था उसे वह जान चुकी थी। कहाँ वियनाई मालिक का जिंदादिल मिजाज़ और कहाँ उत्तरी जर्मन मालकिन का सर्द अक्खड़ रवैया।

चाहे जो हो, तमाम तरीकों से क्रेसेंज यह ज़ाहिर करने लगी थी कि मालकिन के प्रति उसमें नफ़रत भरी हुई है। ब्रिगेटा लेडरशीम को दो-तीन बार घंटी बजानी पड़ती, तब कहीं जाकर क्रेसेंज जवाब देती और फिर इतने बेमन और सुस्त चाल से आती कि कोई भी झुंझला उठे। उसके उठे हुए कंधे किसी अड़ियल और चिड़चिड़े घोड़े का ही

आभास देते जिसे चाहे जितना पीटो उसके कान पर जूँ नहीं रेंगती। उसमें प्रतिद्वंद्विता साफ़ झलकती जिसे लांघना असंभव दिखता। मालकिन के आदेशों को सुनकर वह हाँ या ना में कोई जवाब नहीं देती। बात दोहराई जाती तो क्रसेंज बड़ी बेरुखी से गर्दन हिला देती या फिर अपने देहाती लहजे में लंबा खींचकर कहती, “मैंने सुन लिया है।” मालकिन कभी बाहर जाने के लिए तैयार हो रही होती तो उसे दराज़ की चाभी नहीं मिलती जिसमें जेवरात रहते। आधे घंटे तक काफ़ी खोजबीन के बाद कमरे के किसी कोने में चाभी पड़ी मिलती। क्रसेंज ने मालकिन को टेलीफोन से संदेश तो कभी न देने की मानो क्रसम ही खा रखी थी। जब वह डांटती तो ढिठाई से कह देती, “मैं भूल गई।” वह मालकिन के साथ कभी आंखें मिलाकर बात नहीं करती थी। शायद मन के भीतर डर था कि उसके प्रति उसमें जो नफ़रत भरी है वह उजागर न हो जाए।

इन तमाम घरेलू परेशानियों के चलते पति-पत्नी के बीच लड़ाई-झगड़ा बढ़ता ही गया। जाहिर है कि नौकरानी की इस नफ़रत और बदसलूकी से मालकिन अनजान नहीं थी जिसकी वजह से उसका दिमागी असंतुलन बढ़ता ही गया। लंबे अरसे तक कुंवारी रहने से उसकी नसों पर यूँ भी बहुत ज़्यादा दबाव रहा था और पति की उपेक्षा से भी उसकी कड़वाहट में इज़ाफ़ा हुआ था तिस पर नौकरों का यह बर्ताव और उन्हें बनाए रखने में खुद की नाकामी ने उसे और ज़्यादा चिड़चिड़ा और असंतुलित बना दिया था। अनिद्रा से बचने के लिए वह जो दवाइयाँ लेती थी उसने रही-सही कसर पूरी कर दी थी। उसकी हालत दिनों दिन बदतर होती जा रही थी, पर संकट की इस घड़ी में ऐसा कोई न था जो बेचारी स्त्री के साथ हमदर्दी दिखाए और जीवन को सही नज़रिए से जीने या खुद पर काबू रखने में उसकी मदद कर सके। उसने एक डॉक्टर को भी दिखाया, जिसने कुछ माह हवा-पानी बदलने के लिए सेनियोरियम में रहने की सलाह दी। जब उसने पति को बताया तो उसने इतने बेतुके जोश से इस प्रस्ताव पर हामी भरी कि बीवी ने जाने से इंकार कर दिया। पर आख़िरकार वह जाने के लिए राज़ी हो गई। अपनी एक नौकरानी को साथ ले जाने और इस बड़े मकान में बैरन की देखभाल के लिए क्रसेंज को छोड़ने का उसने इरादा किया।

ज्यूँ ही क्रसेंज ने यह ख़बर सुनी कि उसके प्यारे

मालिक की देखभाल का ज़िम्मा अब उसके हाथों में होगा, उसमें बिजली की-सी उत्तेजना आ गई। जैसे उसे कोई जादू की शीशी मिल गई हो। एक ऐसा अमृत जिसने उसकी तंद्रा और सोई इंद्रियों को झकझोर कर उसका तो जैसे कायाकल्प कर दिया। उसके अंग जो पहले सख़्त, कड़े और भद्दे जान पड़ते थे, अब उनमें एक नई चुस्ती-फुर्ती और लचीलापन आ गया था। जब मालकिन के जाने का समय आया तो किसी के हुक्म का इंतज़ार किए बग़ैर ही पूरे घर में दौड़ लगाकर उसने सारा सामान तैयार किया और फिर कुली की तरह कंधे पर लादकर गाड़ी में रख दिया। बीवी को गाड़ी में बैठाकर देर शाम जब बैरन घर लौटा, तो बेताबी से इंतज़ार कर रही क्रसेंज को अपना कोट और टोप उतारकर दिया और फिर एक लंबी सांस खींचकर बोला, “मैं उसे सही-सलामत आसानी से भेज सका।” तभी असाधारण बात घटी। जैसे पहले ही बताया गया था कि क्रसेंज पशुओं से मेल खाती थी यानी कभी हँसती नहीं थी। पर अब अचानक एक अनजानी अनुभूति से उसके होंठ सजीव हो उठे। मुस्कराते वक़्त उसका मुँह खुलकर इतना चौड़ा हो गया कि लेडरशीम को नौकरानी के चेहरे की इस अभिव्यक्ति से दुखद आश्चर्य हुआ और नौकरानी के साथ इतना खुल जाने पर उसे शर्म भी महसूस हुई। इसलिए आगे एक लफ़्ज़ भी कहे बग़ैर वह अपने बेडरूम में चला गया।

यह बेचैनी कुछ पल ही रही। अगले कुछ ही दिनों में मालिक और नौकरानी इस एकांतवास में अनोखी अनुभूति से भर उठे और चैन से रहने लगे। बीवी के चले जाने से पूरा माहौल बदल गया था। रूडोल्फ भी ज़िम्मेदारी के बोझ से हल्का महसूस करने लगा और हर वक़्त अपनी हरकतों के लिए सफ़ाई देने को जो खटका बना रहता था उससे मुक्त होकर अगले ही दिन देर से घर लौटा। क्रसेंज ने जिस तरह मौन भक्ति से स्वागत किया वह उसकी बीवी ब्रिगेटा की बकबक से एकदम उलट था जो घुसते ही सवालियों की झड़ी से उसका स्वागत करती थी।

क्रसेंज अब अपना काम सामान्य उत्साह से कहीं ज़्यादा जोश से करने लगी थी। सवेरे बहुत जल्दी उठ जाती थी। फर्नीचर को इतना रगड़ती कि उसमें चेहरा दिखने लगे, दरवाज़े के हथ्यों को चमकाते-चमकाते थक जाती फिर भी उसे संतोष नहीं मिलता था, खाने के स्वाद का तो ख़ैर जवाब

ही नहीं था। खाना भी उन बर्तनों में परोसती जो खास मौकों के लिए थे। हालांकि बैरन यह सब देखकर वाकई दंग था। हालांकि बैरन की इन बातों में ध्यान देने की आदत नहीं थी पर इस अजीबोगरीब नौकरानी द्वारा बरते गए खास एहतियात और तवज्जों को अनदेखा करना असंभव था। भले स्वभाव का होने के नाते उसने कृतज्ञता व्यक्त की। उसकी पाक-कला की तारीफ़ भी की। फिर एकाध दिन बाद जब उसका जन्मदिन पड़ा तो क्रैसेंज ने उसके लिए खास पेस्ट्री बनाकर उसके नाम से उसे सजाया। यह देख वह मुस्कराकर बोला, “संजी, तुम तो मेरी आदतें बिगाड़ दोगी और तब मैं क्या करूंगा, जब मालकिन लौट आएगी?”

दूसरे देशों के लोगों को मालिक का नौकरानी के साथ इस तरह सहज व खुला बर्ताव, ऐसी उन्मुक्त बातें अविश्वसनीय लग सकती हैं। पर युद्ध के पहले के आस्ट्रिया में यह सब बहुत आम था। कुलीन अभिजात वर्ग आम जन को जिस हिकारत से देखता था यह सब उसी का इज़हार था, मसलन ग्लैशिया के किसी नामालूम से कस्बे में रहने वाला बड़ा ज़मींदार वेश्यालय से लड़की बुलाने के लिए अपने अर्दली को भेजता और अपनी हवस पूरी करने के बाद लड़की को अपने कारिंदों के हवाले कर देता... बिना इस बात की परवाह किए कि उसकी इस एय्यासी की ख़बर जब फैलेगी तो लोग कैसी रसदार बातें बनाएंगे। शिकार का शौक़ीन रौब-रुतबे वाला आदमी, यूनिवर्सिटी प्रोफ़ेसर या कारोबारी रईस के साथ उठने-बैठने की बजाय अपने साइस या बंदूकची के साथ बैठ गप्प लड़ाना या शराब पीना ज़्यादा पसंद करता था।

पर बाहर से जनतांत्रिक दिखनेवाले ये संबंध हालांकि सहज दिखते थे पर ऐसे थे नहीं, मालिक हमेशा मालिक ही रहता और खाने की मेज़ से उठते ही नौकर के साथ कैसे फासला रखा जाए यह वह ख़ूब जानता था। छोटे-मोटे लोग हमेशा अभिजात वर्ग के तौर-तरीकों की नकल करने के लिए लालायित रहते हैं इसलिए बैरन भी देहातिन नौकरानी के साथ अपनी बीवी की बुराई करने में कोई परहेज़ नहीं करता था। उसे यक़ीन था कि वह उससे कभी दगा नहीं करेगी पर उसकी ये बातें उस अज्ञानी देहातिन के मन पर कितना गहरा असर कर रही हैं इस पर उसने कभी गौर नहीं किया।

कुछ दिनों तक तो उसने अपनी जुबान पर काबू रखा और अपने व्यवहार में संयम भी रखा, पर एक मर्तबा यक़ीन होने पर कि वह इस नौकरानी पर पूरा भरोसा कर सकता है, उसने भावी ख़तरों की परवाह किए बग़ैर विवाह के पहले वाली आदतों में रमना शुरू कर दिया। घर अपना था ही, बीबी बाहर थी इसलिए मनमाफ़िक मज़े लूट सकता था। हफ़्ता भर तो वह छड़ा ही रहा। हफ़्ते के आख़िरी दिन उसने क्रैसेंज को बुलाया और बिल्कुल सहज ढंग से शाम को दो लोगों का भोजन मेज़ पर लगाने की हिदायत दी और कहा कि उसके लौटने का इंतज़ार न कर वह सो जाए, बाकी इंतज़ाम वह खुद देख लेगा।

“बहुत अच्छा मालिक,” सब कुछ समझने के बावजूद चेहरे पर हल्का-सा आभास दिए बग़ैर क्रैसेंज ने हामी भरी। पर देर रात जब बैरन ऑपेरा की एक जवान युवती के साथ लौटा तो यह देखकर प्रसन्न हो उठा कि क्रैसेंज जैसी दिखती है उससे कहीं ज़्यादा अक्लमंद है। उसने खाने की मेज़ को फूलों से सजा रखा था। बेडरूम में गया तो देखता क्या है कि न केवल उसका बिस्तर हमेशा की तरह ठीक-ठाक करके रखा था, बल्कि साथ का पलंग भी आकर्षक ढंग से बिछाकर रखा था और उसकी बीबी का सिल्क का गाउन और चप्पलें भी पास में ही रखी थीं। जिस पति के लिए विवाह की रस्मों का कोई खास महत्व नहीं था, यह सब देख मुस्करा उठा कि इस असाधारण सेविका का ख़याल रखने के मामले में वाकई जवाब नहीं। उसके बाद से वह उसकी पक्की विश्वासपात्र बन गई। अगले दिन क्रैसेंज से अपनी प्रेमिका के लिए काम करवाने में बैरन को ज़रा भी झिझक महसूस नहीं हुई।

ऐसे ही एक मौक़े पर क्रैसेंज का नया नामकरण हुआ। डोना अल्वीरा के किरदार के लिए एक उदीयमान गायिका तैयारी कर रही थी। उसी के मुताबिक अपने प्रेमी को डॉन जुआन कहकर बुलाना उसे मौजूं लगा। अगले दिन जब वह बैरन के घर आई तो चहकते हुए बोली, “डॉन जुआन, मैं चाहती हूँ कि तुम अपनी उस लेपॉरैला को बुलाओ।”

रूडोल्फ को यह नाम जंच गया। शायद इसकी इकलौती वजह यह थी कि उस फूहड़ तिरौली देहातिन के लिए यह नाम हास्यास्पद ढंग से बेमेल था। उस दिन के बाद

से वह उसे 'लेपोरैला' के नाम से ही बुलाता। अपना यह नया नाम सुनकर पहले-पहल तो क्रैसेंज चौंकी पर बाद में उसे लगा ज़रूर इसमें उसकी प्रशंसा ही होगी। हालांकि इसके मतलब या संदर्भ का उसे सिर-पैर भी मालूम नहीं था मगर उसके अनगढ़ कानों को यह नाम मधुर जान पड़ता था। इससे उसके अहं की तुष्टि होती और यह सोचकर वह पुलकित थी कि उसके मालिक ने उसे प्यार का नाम दिया है। जब भी 'लेपोरैला' की निर्लज्ज पुकार सुनती तो उसके पतले होंठ मुस्कराहट में खुल जाते और घोड़े जैसे दांत दिख पड़ते। फिर वह यक-ब-यक अपने आका का हुक्म बजाने दौड़ पड़ती।

यह नाम यूं ही मज़ाक में चुना गया था और ऊपर बताया भी गया है कि यह कितना बेमेल था। फिर भी यह सटीक बन चुका था। 'लेपोरैला' नाम की स्त्री की तरह यह 'लेपोरैला' भी अपने मालिक के जुर्म की सहानुभूतिपूर्ण साथिन बन गई थी। अंधेड़ उग्र की यह नौकरानी जिसे प्रेम का कोई अनुभव नहीं था, अपने कामुक युवा मालिक की ऐय्याशी में साथ देने में गर्व महसूस करती थी। मालकिन, जिससे वह नफ़रत करती थी, उसका बिस्तर तक़रीबन हर रात किसी दूसरी स्त्री द्वारा दागी होता था, यह बात उसे सुख देती थी या उस भोगविलास में उसकी काल्पनिक भागीदारी, क्रैसेंज को इससे कोई फ़र्क़ नहीं पड़ता था, पर उसे सुख मिलता ज़रूर था। सालों के कड़े श्रम से उसकी हठीली देह कुम्हलाकर इस कदर बेजान और बेदम हो चुकी थी कि उसमें काम-आकर्षण का कोई चिह्न नहीं बचा था। मालकिन की जगह पर एक के बाद एक लगातार दूसरी औरतों को मालिक का हमबिस्तर होते देख एक छिछोरे क्रिस्म की उत्तेजना से वह रोमांचित हो उठती थी। इस पाप में साझेदारी और अनचीन्हें कामुक माहौल ने उसकी सुप्त वृत्तियों को भड़का दिया था। क्रैसेंज अब सचमुच की लेपोरैला बन गई थी। डॉ. पोंटे के ऑपेरा पाठ की मानिंद वह आनंद और उत्साह से भर उठी थी। इस प्रगाढ़ व उत्तेजक साझेदारी से तमाम अनजाने गुण भीतर ही हिलोरें लेते हुए सतह पर आ गए-छल, दांवपेंच, ताकझांक करने और कनसुई लेने में अब उसकी दिलचस्पी बढ़ने लगी। दरवाज़े पर कान लगाकर सुनती। चाबी के सुराख से भीतर झांकती, फुर्ती से इधर-उधर दौड़ लगाती। पड़ोसी भी उसके इस बदले रूप को देखकर

चकित थे। अब वह लोगों से मिलने-जुलने लगी थी। नौकरों के साथ गपशप करती, डाकिए के साथ हँसी-मज़ाक करती, और अब बाज़ार में भी औरतों के साथ यहाँ-वहाँ की गप्प लड़ाती। एक शाम तो कमाल ही हो गया जब नौकरों के क्वार्टरों की सारी बत्तियां बुझा दी गई थीं तो क्रैसेंज की खिड़की के सामने रहने वाली नौकरानियों ने हमेशा शांत रहने वाली उस खिड़की से एक अनोखी गुनगुनाहट सुनी, अपने बेहंगे, अनगढ़ स्वर में वह एक लोकगीत गा रही थी, जो आल्प्स के चरागाहों में ग्वालिनें गाती हैं। उसके अनभ्यस्त होंठ और गले से एक ही तरह की लय निकल रही थी जैसे कोने में उपेक्षित पड़े पिआनो पर कोई बच्चा उंगलियां फिराता है तो जो स्वर निकलता है वह एक ही साथ दिल को छूता है और अरुचि भी पैदा करता है। छुटपन से अब तक उसने कभी गाने की कोशिश नहीं की थी पर अब उन भूले-बिसरे बरसों के अंधकार में से कुछ उभरकर रोशनी की ओर लपकने के लिए ज़ूझ रहा था।

जिस शख्स की वजह से यह असाधारण कार्याकल्प उसमें हुआ था वह खुद इससे पूरी तरह बेख़बर था- क्योंकि अपनी ही परछाई पर ध्यान देने की ज़हमत भला कौन उठाता है? बेशक हम अधखुली आँख से देखते हैं कि कैसे वह ठीक हमारे क़दमों के पीछे या कभी-कभार आगे भी चलती है (किसी ख़्वाहिश की तरह जिससे हम खुद पूरी तरह वाकिफ़ नहीं होते) मगर हम अपने रूप की नकल पर कभी ध्यान ही नहीं देते और न ही अपने व्यक्तित्व के व्यंग्य-चित्र (कार्टून) को पहचान पाते हैं। लेडरशीम ने बस क्रैसेंज की एक बात पर गौर किया कि वह पूरी निष्ठा, ख़ामोशी और आत्म-त्याग से हर वक़्त उसकी सेवा के लिए तत्पर रहती है। उसकी यह मूक आराधना उसे सुखद लगती थी। वक़्त-बेवक़्त जैसे हम कुत्ते को थपथपा देते हैं वैसे वह भी एकाध मीठे बोल कह देता था। कभी-कभार उसके साथ मज़ाक भी कर लेता या हँसते हुए कान मरोड़ता, चलते-फिरते कभी थिएटर का टिकट जैसी मामूली-सी चीज़ें जेब से निकालकर उसे थमा देता। मामूली होते हुए भी यह क्रैसेंज के लिए बेशकीमती ख़जाने से कम नहीं थीं जिन्हें वह बतौर यादगार अपनी संदूचकी में सहेजकर रख लेती।

धीरे-धीरे अपने दिल की बात खुलकर उसे बताने की बैरन को आदत पड़ गई। एक से एक मुश्किल जिम्मेदारी



वह उसे सौंपने लगा। जैसे-जैसे उसका भरोसा बढ़ता गया क्रेसेंज की स्वामिभक्ति भी उतनी ही बढ़ती गई। वह उसकी इच्छाओं को भांपने की कोशिश करती। चाहती कि उसकी हर कामना के कारसाज के रूप में वह उसके भीतर पैठ जाए, ताकि उसके हर भोगविलास और आनंद को उसी की आँखों से देख सके, कानों से सुन सके, उसके सुख को भोग सके और हर कामयाबी को बांट सके। रात को जब किसी नई लड़की के साथ लौटता तो वह चहक उठती और उसे अकेला लौटते देख वह बुझ जाती। पहले जैसे उसके हाथ अनवरत तेज़ी से चलते थे, अब दिमाग़ भी चलने लगा था और आँखों में अक्लमंदी की एक नई किरण कौंधने लगी थी। आठों पहर बोझ से लदा पशु अब एक इंसान बनने लगा था। हालांकि अब भी वह अलग-थलग और ख़ामोश रहती। वह धूर्त, ख़तरनाक, ध्यानमग्न और पहले से कहीं ज़्यादा आक्रांत, बेचैनी और विद्वेष से भरी रहती।

एक दिन बैरन हमेशा से कुछ जल्दी घर लौट आया। हाल से भीतर जाते वक़्त वह हैरानी से भर उठा जब उसने रसोई के किवाड़ के पीछे, जहाँ अक्सर अखंड ख़ामोशी पसरी रहती थी, अस्फ़ुट हँसी की आवाज़ सुनी। किवाड़ बस भिड़ा हुआ था और झिरी में से लेपोरैला एप्रन से हाथ पोंछती दिखाई दे रही थी, चेहरे पर एक ही साथ धृष्टता और उलझन साफ़ दिख रही थी।

“इस गुस्ताख़ी के लिए माफ़ करें मालिक,” निगाहें नीची किए उसने कहा, “पर मैं पेस्ट्री बनाने वाले रसोइए की बेटी को यहाँ लाई हूँ; वह कितनी ख़ूबसूरत है मैं क्या बताऊँ, आपसे मिलकर बहुत खुश होगी।”

लेडरशीम पहले पहल तो क्रेसेंज को घूरता रहा। उसे समझ नहीं आ रहा था कि उसकी इस निर्लज्ज पेशकश को फौरन ठुकरा दे या फिर हाथ आए इस सुनहरे मौक़े का फायदा उठाए। वासना भीतर मचलने लगी और उसी की जीत हुई।

“ठीक है, इस सुंदरी को देख ही लेते हैं,” वह बोला।

सोलह बरस की भूरे बालों वाली फूहड़-सी बाला रसोई से सकुचाती-शर्माती बाहर आई जिसकी लेपोरैला ने बढ़ा-चढ़ाकर तारीफ़ की थी। अज़ीब ढंग से लहराती, बेवजह खीं-खीं करती उस रसिक नवयुवक को अपनी ख़ूबसूरती

से रिझाने लगी, जिसे कई मर्तबा सड़क पार दूकान से देख मन-ही-मन उस पर लट्टू हो गई थी। बैरन उसकी सुंदरता पर रीझ गया और चाय पीने के लिये अपने कमरे में आने के लिए कहा। इशारे के लिए वह क्रेसेंज की ओर मुड़ी पर वह तो गायब हो चुकी थी। जिज्ञासा और उत्तेजना से भरी (क्योंकि चेहरे पर झेंप और उलझन ज़ाहिर थी) उस बाला ने उस निमंत्रण को क़बूल करना मुनासिब समझा।

पर व्यक्ति का स्वभाव पूरी तरह बदल नहीं सकता। हालांकि गुमराह आवेग के वशीभूत इस जड़ व्यक्तित्व में थोड़ी बहुत रुहानी गतिशीलता ज़रूर आई थी पर उसके सोच-विचार की यह नई शक्ति अब भी सीमित थी जिससे क्रेसेंज बहुत दूर की सोचने में असमर्थ थी। अब भी जड़ पशुओं की तरह उसमें कल्पनाशीलता और सूझ-बूझ की कमी थी। उसकी बस एक ही चाहत थी कि अपने मालिक की जी-जान से सेवा करे, जिससे कुत्ते की-सी स्वामिभक्ति से वह प्रेम करती थी, इसमें वह इस कदर खोई थी कि कुछ अरसे के लिए बाहर गई बीवी को पूरी तरह भुला बैठी थी।

एक सुबह अचानक जब बैरन नाक-भौं चढ़ाए हाथ में चिट्ठी लिए रसोई में आया और लेपोरैला से कहा कि आज का पूरा दिन वह घर की अच्छी तरह साफ़-सफाई कर ले, क्योंकि अगली दोपहर उसकी बीवी सेनिटोरियम से वापस आ रही है तो यह सुनकर उस पर मानो आसमां टूट पड़ा। मुँह खोले वह अवाक् खड़ी रही। उसकी हालत ऐसी थी मानो सीने में छुरा भोंक दिया हो। मूक खड़ी बैरन को देर तक एकटक देखती रही और जब उसे सहज बनाने के लिहाज़ से बैरन ने समझाया; “संजी क्या बात है, तुम ज़रा भी खुश नहीं दिख रही हो? पर बताओ हम कर भी क्या सकते हैं।”

यह सुन उसके सख़्त चेहरे पर हल्की-सी हरकत हुई मानो भीतर कुछ पक रहा हो। लगा जैसे अंतस में कोई लहर उठी हो और उसके कुम्हलाए गालों पर सुख लालिमा दौड़ गई, गला रुंध गया और बमुश्किल चंद लफ़्ज मुँह से निकले:

“आख़िर... क्यों नहीं... कोई...”

लफ़्ज गले में ही अटककर रह गए। द्वेष से चेहरा विकृत हो उठा। हाव-भाव इस कदर डरावना हो गया कि

एक बारगी लेडरशीम खुद भी काँप उठा और चौकन्ना होकर ठिठक गया। पर दूसरे ही पल क्रैसेंज काम में जुट गई। एक पतीली को उठाकर इस कदर जोर-जोर से रगड़ने लगी मानो उंगलियों की खाल को ही उधेड़कर रख देगी।

मालकिन के लौटते ही, सुख-चैन का जो माहौल उसकी गैर मौजूदगी में पूरे घर में व्याप्त था, काफ़ूर हो गया। दरवाज़ों का जोरों से पीटना-पाटना, बेवजह की डाँट-फटकार फिर शुरू हो गई।

कुछ पड़ोसियों ने शायद उसके पीछे चल रही रंगरलियों की ख़बर अनाम ख़त के ज़रिए बीबी को कर दी थी या फिर जिस सर्द ढंग से उसने बीबी का स्वागत किया वह उसके मन की भावनाओं को ज़ाहिर करने के लिए काफ़ी था। खैर, चाहे जो हो दो महीने के इलाज़ के बावजूद उसकी हालत सुधरने की बजाय बिगड़ गई थी। पहले का रोना-धोना अब धमकियों और उन्मादी दौरों में बदल गया था। पति-पत्नी संबंधों में दिनोंदिन कड़ुवाहट बढ़ती गई। कुछ हफ़्तों तक तो बैरन अपनी भलमनसाहत के चलते पत्नी के तानों, उलाहनों की बौछार को पूरे धीरज से नज़रअंदाज़ करता रहा या उसे दिलासा देता रहा, पर वह लगातार तलाक के लिए उसे अदालत में घसीटने या फिर माँ-बाप को सब कुछ लिखने की धमकियां देती रहती। वह अमूमन चुप ही रहता। उसके इस उपेक्षापूर्ण रवैए का उस पर और बुरा असर पड़ता। धीरे-धीरे उसे लगने लगा कि वह गुप्त दुश्मनों से घिरी हुई है। इस घबराहट भरी उत्तेजना से उसे पागलपन के दौरे पड़ने लगे।

क्रैसेंज ने अपनी पहले वाली चुप्पी का कवच ओढ़ लिया था। अलबत्ता अब उसकी यह चुप्पी डरावनी और आक्रामक लगती थी जब मालकिन लौटी तो वह रसोई में ही बनी रही। बुलाने पर भी मालकिन के स्वागत के लिए बाहर नहीं आई। काठ की मूर्त बनी खड़ी रही। बेहयाई से कंधे उचकाकर मालकिन के हर सवाल का जवाब इतनी बेरुखी से दिया कि बेसब्र मालकिन कुछ और पूछे बग़ैर मुड़कर चली गई, जबकि क्रैसेंज नफ़रत और द्वेष से भरी उसकी पीठ को घूरती रही, जिसका मालकिन को कोई अंदाज़ा नहीं था। ईर्ष्या से भरी उसे लगने लगा कि मालकिन के घर लौट आने से सहचरी बन सेवा करने के सुख से वह वंचित हो गई है और उसे सिर्फ़ रसोई में खटने के लिए झोंक दिया गया है।

उसे सबसे ज़्यादा दुख इस बात का था कि उसका प्यारा नाम लेपौरैला भी छिन गया है, क्योंकि बैरन पूरी सावधानी बरतता कि बीबी की मौजूदगी में क्रैसेंज के प्रति कोई सहानुभूति ज़ाहिर न होने दे। हालांकि यदा-कदा बीबी के उलाहनों से थक-हारकर थोड़ी देर उनसे निजात पाने की मंशा से रसोई में चुपके से चला आता, कोने में पड़ी तिपाई खिसकाकर बैठ जाता और बेज़ार होकर गहरी सांस लेकर कहता:

“अब और बर्दाश्त नहीं होता।”

यही कुछेक पल लेपौरैला के लिए बेहिसाब खुशी से भरे होते, जब उसका देवता स्वरूप मालिक हमदर्दी पाने के लिए उसकी शरण में आता था। वह कभी जवाब देने या दिलासा देने की ज़रूरत नहीं करती थी, बस दासी की तरह देवता को करुणा से ताकते हुए ख़ामोश बनी रहती। इस निःशब्द सहानुभूति से लेडरशीम को कुछ पल राहत मिलती पर रसोई से बाहर आते ही सारी परेशानियां फिर उसे घेर लेतीं। यह सब देख क्रैसेंज बेबसी भरे गुस्से से भर अपने हाथ मरोड़ती या फिर सारा गुस्सा बर्तनों पर निकालती और पूरे आवेश और ताक़त से उन्हें रगड़ने और चमकाने में जुट जाती।

श्रीमती बैरन के आने से माहौल में जो उमस आ गई थी, आखिरकार एक भयंकर तूफ़ान में फट पड़ी। एक दिन लड़ाई-झगड़े के दौरान बैरन का धीरज जवाब दे गया और शिष्टाचार के नाते हर ज़्यादती को नज़रअंदाज़ करने के अपने स्वभावगत रवैए को इस मर्तबा उसने ताक पर रख दिया, दरवाज़े को इतनी जोर से बंद करते हुए कमरे से बाहर निकला कि फ़्लैट की हर खिड़की का पुर्जा-पुर्जा खड़खड़ाने लगा, फिर चीखा; “मैं इस ज़िंदगी से तंग आ गया हूँ।”

गुस्से से चेहरा एकदम नीला पड़ गया था। दनदनाते हुए रसोई में घुसा और थरथराती क्रैसेंज को चिल्लाकर बोला:

“फौरन मेरा सामान बांधो और बंदूक की पेटी भी नीचे ले आओ। मैं हफ़्ते भरके लिए शिकार पर जा रहा हूँ। इस नरक में तो शैतान भी नहीं टिक सकता।”

क्रैसेंज ने नज़रें उठाकर उसकी तरफ़ देखा। उत्साह से उसकी आँखें चमकने लगीं। अब जाकर उसने इस घर के असली स्वामी का रूप धरा था। फटे स्वर में हँसते हुए वह

बोली; “ठीक है मालिक वक्त आ गया है कि इस सबका खात्मा हो ही जाना चाहिए।”

जोश से लरजते हुए एक कमरे से दूसरे में भाग-भागकर उसने वह सारा सामान इकट्ठा किया जिसकी मालिक को शिकार पर जाने के लिए ज़रूरत पड़ सकती थी। सामान और बंदूक का बक्सा उठाकर गाड़ी में रखा। कृतज्ञता व्यक्त करने के लिए वह शुक्रिया कहना चाहता था कि तभी उसका हाव-भाव देखकर काँप उठा। उसके निचुड़ें होंठ कुटिल मुस्कान में खुल गए थे, जिसे देखकर यूँ भी वह हमेशा चौकन्ना हो उठता था, क्योंकि उसे देख अनायास ही ज़ेहन में झपटने के लिए आतुर शिकारी जानवर की तस्वीर उभर आती थी। बाहर से वह शिष्ट बनी रही और जैसे ही गाड़ी चलने को हुई उसने आत्मीयता भरी ढिठाई से फुसफुसाकर कहा:

“आपका वक्त मज़े से गुज़रे। यहाँ की चिंता मत करिएगा, मैं सब संभाल लूँगी।”

तीन दिन बाद बैरन को एक तार मिला—

“फौरन घर लौट आओ।”

जिस चचेरे भाई ने तार भेजा था वह उसे लेने स्टेशन पर आया। उसके चेहरे को देखते ही बैरन ने भांप लिया कि कुछ अनहोनी घटी है। बड़ी मुश्किल से वह रूडोल्फ को वह ख़बर सुना सका। उसने बताया कि “श्रीमती बैरन वॉन लेडरशीम आज सुबह बिस्तरे पर मृत पाई गईं, कमरा बुझे गैस-हीटर की गैस से भर गया था। दुर्घटना का सवाल ही नहीं उठता। यह सब किसी की साजिश लगती है, क्योंकि पूरी गर्मियों में गैस-हीटर का इस्तेमाल ही नहीं किया गया था और मौसम अब भी गर्म ही था। अलावा इसके मृत स्त्री ने रात भर में दर्जन या उससे भी ज़्यादा नौद की गोलियाँ खा रखी थीं। खाना बनाने वाली नौकरानी क्रैसेंज, जो मालकिन के साथ घर में अकेली थी, ने बयान दिया है कि उसने मालकिन के ड्रेसिंग-रूम में जाने की आवाज़ सुनी थी, संभवतः गैस स्टोव के मुख्य स्विच को चालू करने के लिए वहाँ गई थी जिसे सुरक्षा के लिहाज़ से बेडरूम की बजाय वहाँ लगाया गया है। इन तमाम तथ्यों के मद्देनज़र पुलिस ने इसे आत्महत्या का मामला तसदीक किया है।”

बैरन के हाथ कांपने लगे। चचेरे भाई ने जब क्रैसेंज के बयान का ज़िक्र किया तो उसके रोंगटे खड़े हो गए। ज़ेहन में अनायास एक दुखद ख्याल कौंधा। मगर उसने इस यातनादायी ख्याल को झटक दिया और अर्नेस्ट के साथ चुपचाप घर की तरफ़ चलता रहा। शव हटाया जा चुका था। रिश्तेदार ड्राईंग रूम में इंतज़ार कर रहे थे। उनके हाव-भाव में विरोध साफ़ झलक रहा था। उनकी संवेदनाएं भी सूर्य थीं। उस पर इल्ज़ाम मढ़ने के अंदाज़ में ही वे बोले कि यह सब बताना हम अपना फर्ज़ समझते हैं, “बदनामी से बचना अब नामुमकिन है क्योंकि सुबह-सवेरे ही नौकरानी ने जीने पर खड़े होकर एलान कर दिया कि “मालकिन ने खुदकुशी कर ली है।” अंतिम-संस्कार को शांति से निपटाने की पूरी तैयारी की गई थी पर लोग तो अभी से उल्टी-सीधी बातें करने लगे हैं।”

रूडोल्फ़ लेडरशीम दुविधा में सारी बातें सुनता रहा, अनजाने में ही उसकी नज़रें बैठक के दरवाज़े से होती हुई बेडरूम तक गईं और फिर फौरन उसने नज़रें झुका लीं। वही ख्याल उसे साल रहा था जिसकी तर्कपूर्ण तह तक वह पहुंचना चाहता था। पर इन बेतुकी और लांछनभरी बकबक के बीच सही ढंग से सोच पाना नामुमकिन था। आध घंटे तक रिश्तेदार वहाँ रुके और लगातार निंदा और भर्त्सना करते रहे। फिर एक-एक कर सब विदा हो गए। उस अंधेरे कमरे में रूडोल्फ़ अकेला रह गया। इस अनपेक्षित सदमे की मार से उसका सिर दुखने लगा था और शरीर थक गया था। फिर भी वह-खड़ा रहा, इस कदर बेजान कि बैठने की भी सुध नहीं थी।

तभी दरवाज़े पर किसी ने दस्तक दी।

“आ जाओ!”

पीछे से दरवाज़ा खुला। हिचकते, लड़खड़ाते कदमों की आवाज़ उसने सुनी—जिन्हें वह पहचानता था। वह दहल उठा। उसे लगा जैसे कोई उसका गला घोट रहा हो, अंग-अंग में सिहरन-सी महसूस हुई। उसने मुड़ने की कोशिश की पर उसके शरीर ने साथ नहीं दिया। इस तरह वह कमरे के बीचो-बीच कांपता, ख़ामोश हाथ बांधे खड़ा रहा। उसे इस बात का पूरा अहसास था कि उसकी यह कसूरवार ख़ामोशी कितनी घृणित थी। तभी पीछे से शुष्क, उदासीन, नीरस स्वर में कुछ पूछा गया:

“मैं सिर्फ यह पूछने आई थी कि मालिक घर पर खाएंगे या बाहर।”

बैरन की कंपकंपी बढ़ गई और एक सर्द लहर ने उसके दिल को जकड़ लिया। जवाब देने के लिए उसे तीन बार कोशिश करनी पड़ी।

“शुक्रिया मुझे कुछ नहीं खाना है।”

इससे पहले कि वह पीछे मुड़ने की हिम्मत करता, वे लड़खड़ाते क़दम लौट गए थे। तब कहीं उसकी जड़ता टूटी। वह सूखे पत्ते की तरह कांप रहा था फिर भी इतनी ताक़त बची थी कि लपककर दरवाज़े तक जाए और सिटकनी लगा दे। उसने फ़ैसला कर लिया कि उन घृणित और दुष्ट क़दमों को दोबारा भीतर नहीं आने देगा। फिर वह सोफे पर कटे वृक्ष की तरह गिर पड़ा। उस धिनौने ख़्याल को झटकने की कोशिश करता रहा। पर रात भर वह ख़्याल उस पर हावी रहा और सोने नहीं दिया। सुबह उठने पर भी वही ख़्याल उसे कचोटता रहा। यहाँ तक कि रिवाज़ के मुताबिक काले सूट में जब वह अपनी मृत पत्नी के ताबूत के सिरहाने मुख्य विलापी के रूप में खड़ा था तब भी उस ख़्याल ने उसका पीछा नहीं छोड़ा।

अंत्येष्टि पूरी होते ही वह शहर छोड़कर भाग गया। मित्र और रिश्तेदार जिन नज़रों से उसे देखते थे वह उसके बर्दाश्त से बाहर था। उनके बर्ताव में सहानुभूति से ज़्यादा जिज़ासा दिखाई देती या फिर शायद उसे ही ऐसा लगता था। यह उसका भ्रम हो या असलियत पर यह असहनीय था। और तो और घर का फर्नीचर, खासकर बेडरूम की हर चीज़ (जहाँ अब भी गैस की चिपचिपी बदबू बसी हुई थी) उस पर इल्ज़ाम लगाती दिखाई देती थी। इसलिए घर में घुसते ही वह घृणा से भर उठता। पर सबसे ज़्यादा असहनीय दुःस्वप्न की तरह जो बात उसे खटक रही थी वह यह थी कि वह स्त्री जो किसी वक़्त उसकी विश्वासपात्र थी, एकदम अविचलित बनी हुई थी। दिन हो या रात उस भुतहा ख़ाली घर में अपने काम में इस तरह रमी रहती जैसे कुछ घटा ही न हो। स्टेशन पर जबसे उसके भाई ने उसका नाम लिया था बस उसी पल से वह उसकी परछाई तक से कांपने लगा था। उसके क़दमों की आहट सुनते ही उसका मन भाग पड़ने को बेचैन हो उठता। उसके ख़्याल से ही उसे मतली आने लगती।

उसकी कठोर आवाज़ तेल से चुपड़े बाल, शुष्क पशुवत निर्दयता से उसे नफ़रत हो गई थी। गुस्से ने उसे इस कदर लाचार कर दिया था कि उसमें इतनी भी ताक़त नहीं बची थी कि उस घृणित जीव से खुद को छुड़ा सके या गला घोटने वाली उन उंगलियों की जकड़न से मुक्त हो सके। एकमात्र रास्ता था कि वहाँ से भाग जाए। उसने चुपचाप अपना सामान बांधा, उससे कुछ कहे-सुने बग़ैर चोरी-छिपे चला गया। कागज़ पर लिख दिया कि वह अपने दोस्तों के साथ रहने जा रहा है।

गर्मियाँ पूरी होने तक वह नहीं लौटा। हाँ, एक मर्तबा अपनी स्वर्गीय बीबी की जायदाद से जुड़े मसले को निपटाने के सिलसिले में उसे आना पड़ा था। तब वह होटल में ही ठहरा, ताकि घर में मौजूद उस दुष्ट औरत का सामना न करना पड़े। क्रैसैंज जो अपने में ही सिमटी रहती थी उसके वियना आने के बारे में कभी जान ही नहीं पाई। बेकार, बेमकसद वह अपना पूरा वक़्त रसोई में ही गुज़ारती, इबादत के लिए दिन में दो बार (पहले के एक बार की बजाय) चर्च जाती। बैरन का वकील उसके वेतन का हिसाब-किताब कर देता। मालिक के बारे में उसे कभी कोई ख़बर नहीं मिलती। उसने न तो कोई संदेश भेजा न कभी चिट्ठी लिखी।

इस ख़ामोश प्रतीक्षा के दौरान उसका चेहरा पहले से ज़्यादा कड़ा और कमज़ोर हो गया। उसकी चाल भी पहले की तरह काठ-सी निष्प्राण हो गई। मानसिक जड़ता की इस अजीब हालत में कई महीने गुज़र गए। पतझड़ में किसी ज़रूरी कारोबारी काम से बैरन को घर आना पड़ा। दहलीज़ पर आकर वह ठिठक गया। एक लंबा अरसा अपने अजीज़ दोस्तों के संग गुज़ारने से वह काफ़ी कुछ भुला सका था पर अब एक बार फिर किसी वक़्त उसकी सहयोगी रह चुकी उस स्त्री से सामना होने के ख़्याल मात्र से वह विचलित हो उठा। गुस्से और आवेश से भर उठा, जैसे पत्नी की मृत्यु के अगले दिन हुआ था। क़दम-दर-क़दम जैसे वह सीढ़ियाँ चढ़ता गया उसे लगा कोई अदृश्य हाथ उसका गला जकड़ रहा है। उसके क़दम सुस्त पड़ते गए। दरवाज़े तक पहुँचकर ताले में चाबी घुमाने के लिए उसे अपनी समूची ताक़त बटोरनी पड़ी।

आवाज़ सुनते ही भाँचवकी-सी क्रैसैंज रसोईघर से

दौड़ते हुए बाहर आई। मालिक को सामने देख वह पीली पड़ गई। फिर, मानो प्रणाम कर रही हो, वह झुकी और बैग उठा लिया जिसे भीतर आकर उसने नीचे टिका दिया था। स्वागत में कुछ भी कहने का उसे भान ही नहीं था। बैरन भी खोया-खोया सा था। उसने अभिवादन में एक शब्द भी नहीं कहा। बैग उठाकर चुपचाप बेडरूम में ले गई, वह भी खामोशी से उसके पीछे हो लिया। सामान रखकर जब तक बाहर नहीं निकल गई, वह खिड़की के पास खड़ा बाहर देखता रहा। उसके जाते ही सिटकनी लगा दी।

इतने दिनों बाद मिलने पर उन दोनों के बीच बस इतना ही संपर्क हुआ।

क्रेसेंज इंतज़ार करती रही। बैरन भी इसी इंतज़ार में था कि उसे देखते ही जो भय उस पर हावी हो जाता है वह उससे उबर आएगा। पर हालात में कोई सुधार नहीं आया। देखना तो दूर, दरवाज़े के बाहर उसकी आइट भर से उसका जी घबराने लगता। वह जो नाशता बनाती उसका एक दाना भी वह नहीं खा पाता। सुबह होते ही वह रोज़ तैयार होकर घर से खिसक लेता और देर रात को ही लौटता ताकि उसके साए से भी दूर रह सके। कभी-कभार उसे कुछ हिदायतें देना ज़रूरी होता तो उसकी ओर देखे बग़ैर दे देता।

दूसरी ओर क्रेसेंज भी रसोई में तिपाई पर चुपचाप बैठकर अपने दिन गुज़ार रही थी। वह अपने लिए खाना भी नहीं बनाती थी। उसकी भूख मर चुकी थी। किसी से एक लफ़्ज़ भी नहीं बोलती। सहमी-सी हर वक़्त मालिक की पुकार का इंतज़ार करती रहती-कोड़े की मार खाए कुत्ते की तरह जो जानता था कि उसने गलती की है। दरअसल वह इतनी मूर्ख थी कि उसे अपनी गलती की गंभीरता का अंदाज़ा ही नहीं था। वह तो बस इतना जानती थी कि उसके मालिक, उसके स्वामी ने मुंह फेर लिया है और उसकी नाराज़गी उसके लिए बेहद असह्य थी।

बैरन के लौटने के तीन दिन बाद दरवाज़े की घंटी बजी। पायदान पर हाथ में बैग उठाए, बग़ैर दाढ़ीवाला एक बूढ़ा शांत मुद्रा में खड़ा था। क्रेसेंज ने उसे चले जाने का इशारा किया, मगर आगन्तुक ने समझाया कि वह नौकर है और खुद बैरन ने सुबह दस बजे आकर मिलने को कहा था। अच्छा होगा कि क्रेसेंज उन्हें उसके आने की ख़बर कर दे।

वह बर्फ़ की तरह सफेद पड़ गई, हाथ और उंगलियां जस की तस उठीं और खुली रह गईं, फिर एक घायल पक्षी की तरह हाथ नीचे आ गिरा।

“जाकर खुद ही बता दो,” फटकारते हुए उसने अवाक खड़े नौकर से कहा और पैर पटकते हुए रसोई में चली गई, फिर ज़ोर से दरवाज़ा बंद कर लिया।

नौकर को काम पर रख लिया गया था। उसके बाद से रूडोल्फ को क्रेसेंज से कुछ कहने की ज़रूरत ही नहीं थी। उसे कुछ कहना भी होता तो इस शांत नौकर के जरिए कहलवा देता था, जो उम्रदराज़ तो था ही, कई बड़े नामी परिवारों में काम कर चुका था। रसोई के बाहर घर में क्या चल रहा है इसकी क्रेसेंज को अब कोई ख़बर नहीं लगती। बाहर का जीवन उसके सिर के ऊपर उसी तरह चलता रहता जैसे पत्थर के ऊपर बहता पानी।

तक़रीबन एक पखवाड़े तक यही दुखद स्थिति बनी रही। इसका क्रेसेंज पर क्षय का-सा असर हुआ। चेहरा उतर गया, कनपटी के सारे बाल सफेद पड़ गए। पहले उसकी चाल काठ-सी थी जो अब पाषाण हो गई। बुत बनी निश्चल बैठी वह खिड़की के बाहर शून्य में ताकती रहती। जब उसे कोई काम करना पड़ता तो गुस्से और भावावेग से ही करती।

नौकर को काम पर लगे अभी एक पखवाड़ा ही गुज़रा था कि एक सुबह बिन बुलाए मालिक के अध्ययन-कक्ष में आकर कोने में चुपचाप खड़ा हो गया-जिससे साफ़ ज़ाहिर था कि वह कुछ कहना चाहता है। एक मर्तबा पहले भी वह उसे तिरौली महिला की बदसलूकी की शिकायत कर चुका था और उसे नौकरी से निकालने की सलाह भी दी थी। हालांकि मालिक ने क्रेसेंज के प्रति हमदर्दी जताते हुए उसकी बात मानने से इंकार कर दिया था। नौकर की ज़्यादा ज़ोर डालने की हिम्मत नहीं हुई। लेकिन इस मर्तबा उसने पुरज़ोर ढंग से अपनी शिकायत रखी। जब रूडोल्फ ने फिर कहा कि क्रेसेंज एक लंबे अरसे से काम कर रही है और उसे बेदखल करने की कोई वाजिब वजह उसे दिखाई नहीं देती तो भी नौकर उसके इस जवाब को चुपचाप मान लेने की बजाय परेशान-सा बैरन को ताकता रहा और अपने अनुरोध को दोहराते हुए बड़े संकोच और शर्म से उसने बताया:

आपको शायद मेरी बात मूर्खतापूर्ण जान पड़े पर सच यह है कि मुझे उस... औरत से डर लगता है... वह छल और दुर्भावना से भरी है। आपको वाकई अंदाज़ा नहीं कि आपने किस कदर ख़तरनाक इंसान को अपने घर में पनाह दे रखी हैं

तर्जुबे के बावजूद लेडरशीम भयभीत हो उठा पर बताई गई बात अस्पष्ट थी।

“एण्टन, अगर तुम चाहते हो कि मैं तुम्हारी बात मानूँ तो खुलकर साफ़-साफ़ बताओ।”

“मालिक, मैं यक़ीन से तो कुछ भी नहीं कह सकता पर मुझे लगता है कि क्रैसेंज किसी वहशी जानवर की तरह है। एक ऐसा जानवर जो पूरी तरह पालतू नहीं हुआ है। किसी भी वक़्त वह मेरे या आपके साथ दगा कर सकती है। कल जब मैं उसे आपका हुक्म सुना रहा था तो वह मुझे देखने लगी... वह देखना महज़ देखना नहीं था। लगा जैसे मुझ पर झपट्टा मार अपने दांत गड़ा देगी। मालिक मुझे वाकई उसके हाथ का पका खाना खाने में भी डर लगता है। किसी दिन आपको या मुझे ज़हर भी खिला सकती है। आप वाकई नहीं जानते वह कितनी ख़तरनाक है। दरअसल वह कहती तो कुछ भी नहीं है पर मुझे यक़ीन है कि वह किसी का भी खून तक कर सकती है।”

रूडोल्फ उस शिकायतकर्ता को चौकन्ना होकर देखने लगा। क्या उसे कहीं से कुछ भनक लग गई है? या कहीं उसके मन में संदेह तो नहीं घर कर गया है? रूडोल्फ को अपनी उंगलियाँ कांपती-सी लगीं। उसने सिगार एश-ट्रे में टिका दी वरना उसकी घबराहट ज़ाहिर हो जाती। पर एण्टन का चेहरा निरावेग था, उस पर ऐसा कोई भाव नहीं था जिससे लगे कि वह कुछ छिपा रहा हो। नौकर की सलाह उसकी खुद की इच्छा से मेल खाती थीं। वह खुद भी क्रैसेंज से छुटकारा पाना चाहता था।

“मैं हड़बड़ी में कोई क़दम नहीं उठाना चाहता, शायद तुम ठीक कहते हो पर कुछ दिन ठहर जाओ। यदि दोबारा वह कभी सख़्ती से पेश आए तो मुझसे पूछे बग़ैर तुम उसे नोटिस दे सकते हो अलबत्ता उससे यही कहना कि ऐसा तुम मेरे हुक्म से कर रहे हो।”

“ठीक है मालिक” एण्टन बोला।

बैरन ने राहत महसूस की और बाहर आ गया। हालांकि कोई भी बात जो उसे इस रहस्यमय प्राणी की याद दिलाती उससे उसका दिन बिगड़ जाता था। उसने सोचा जिस दिन वह घर पर न हो उस दिन क्रैसेंज को निकालना ठीक रहेगा। क्रिसमस का दिन सबसे उचित रहेगा क्योंकि यह दिन वह मित्रों के संग गुज़ारने वाला है।

अगले दिन सवेरे नाश्ते के तुरंत बाद वह अध्ययन-कक्ष में अभी बैठा ही था कि दरवाज़े पर दस्तक हुई। यूँ ही उसने अख़बार से नज़र उठाकर कहा—

“आ जाओ!”

तभी भारी, लड़खड़ाते क़दमों से वह भीतर आई। यह वही आकृति थी जिससे वह नफ़रत करने लगा था और जो सपनों में भी उसका पीछा नहीं छोड़ रही थी। उसके बदले रूप को देखकर वह अवाक़ रह गया। बदसूरत तो वह थी ही, पर अब उसका मरियल-सा चौड़ा चेहरा ऐसे दिख रहा था जैसे काली पोशाक के ऊपर महज़ खोपड़ी हो। बैरन की नफ़रत करुणा में बदल गई जब उसने देखा कि किस तरह वह दीन-हीन स्त्री कालीन के छोर पर ठिठककर रुक गई। उसमें आगे आने का साहस ही नहीं था। अपने भावों को छिपाने के लिहाज़ से उसने भरसक बेरुखी से कहा; “क्या बात है क्रैसेंज?”

फिर भी सहजता के बजाय उसके स्वर में घृणा ओर गुस्सा ही झलक रहा था।

क्रैसेंज हिली नहीं पर उदासी से कालीन को ही ताकती रही। लंबी ख़ामोशी के बाद बड़ी मुश्किल से उसके भीतर से कुछ शब्द निकले; “एण्टन... एण्टन कहता है कि मालिक ने तुम्हें निकालने का नोटिस दिया है।”

रूडोल्फ लेडरशीम को वाकई दुख हुआ, वह खड़ा हो गया। उसने कभी नहीं चाहा था कि सब कुछ इतनी तेज़ी से घट जाए। रुक-रुककर उसने क्रैसेंज को समझाया कि एण्टन ने जल्दबाज़ी की है। सब कुछ ठीक-ठाक हो सकता है यदि वह नौकर के साथ अच्छा सलूक करे। नौकरों को तो मिल-जुलकर रहना चाहिए।

क्रैसेंज अब भी बुत बनी खड़ी रही मानो उसने कुछ सुना न हो। निगाहें अब भी कालीन में ही धंसी थीं। कंधे

अड़ियलपन से उठे हुए और सिर मायूसी से झुका ही रहा। वह बस एक लफ़्ज सुनना चाहती थी जो नहीं आया। आखिरकार बैरन को वाकई यह हास्यास्पद लगा कि एक नौकर के सामने वह क्यों इस तरह सफ़ाई दे रहा है इसलिए उसने समझाना बंद कर दिया। फिर भी क्रेसेंज बिना कोई जवाब दिए बागी क्रिस्म का मौन धारण किए खड़ी रही।

दो-तीन मिनट तक अजीब ख़ामोशी के बाद वह बोली:

“मैं सिर्फ़ यह जानना चाहती हूँ कि क्या मालिक ने खुद एण्टन को मुझे नोटिस देने के लिए कहा है।”

उसने आवेश व उदासी से भरे ये शब्द बैरन से कहे। क्या उसमें कोई धमकी छिपी थी या फिर चुनौती? पर यह सुनते ही बैरन का संकोच और सहानुभूति पल भर में काफ़ूर हो गई। पिछले हफ़्तों और महीनों से इस स्त्री के लिए जो नफ़रत उसके भीतर ज़ब्र थी उसका बांध टूट गया और वह फट पड़ी। वह उसे दोबारा नहीं देखना चाहता था। एकाएक उसका स्वर बदल गया और उसने कड़ा और व्यावहारिक रुख़ अख़्तियार कर लिया:

“हाँ, क्रेसेंज, यह सच है। परेशानी से बचने के लिए मैंने घर की ज़िम्मेदारी एण्टन को सौंप दी है। उसने यदि तुम्हें नोटिस दिया है तो तुम्हें चले जाना चाहिए। हाँ, अगर तुम उसके साथ तमीज़ से पेश आओ तो मैं उससे बात कर सकता हूँ। फिर मैं उसे तुम्हारी पिछली सारी बदसलूकी को नज़र अंदाज़ करने के लिए कहूँगा। वरना तुम्हें जाना होगा और जितनी जल्दी जाओ उतना अच्छा रहेगा।”

यदि वह उसे धमकाना चाहती थी तो उसे सज़ा मिलनी चाहिए। इस क्रिस्म की बदतमीज़ी वह क्योंकर बर्दाश्त करें?

पर जब क्रेसेंज ने कालीन से आँखें ऊपर उठाईं तो उनमें धमकाने का कोई भाव नहीं था बल्कि शिकार हुए जानवर की कातरता झलक रही थी जो बचने की उम्मीद में झाड़ी में पनाह लेना चाह रहा हो और वहीं से शिकारी कुत्तों का दल टूट पड़े।

“धन्यवाद मालिक, धन्यवाद,” उसने रुंधे गले से कहा। मैं इसी वक़्त यहाँ से चली जाती हूँ। मैं आपके लिए मुसीबत नहीं बनूंगी।”

धीरे से मुड़कर लड़खड़ाते हुए वह बाहर चली गई। उस शाम ऑपेरा से लौटने के बाद बैरन दोपहर में आई डाक देखने के लिए अध्ययन-कक्ष में गया। तभी मेज़ पर रखी एक अनजानी चीज़ पर उसकी नज़र पड़ी। देहाती कारीगरी में बेंत से बना एक आयताकार बक्सा वहाँ रखा हुआ था। उस पर ताला नहीं था। बक्से में बड़ी बारीकी से चीज़ें सहेज़कर रखी थीं। ये छोटी-मोटी चीज़ें थीं जो क्रेसेंज को उसने दी थीं— चंद पोस्टकार्ड जो शिकार पर बाहर जाने पर उसने भेजे थे, थियटर की दो टिकटें, चांदी की अंगूठी, इन्हीं के साथ नोटों की एक गड्डी (जो ज़िंदगी भर की कमाई थी) रखी थी और बीस बरस पहले तिरौल में ली हुई एक तस्वीर, जिसमें उसकी आँखें रोशनी में चुंधिया गई थीं और उनमें ठीक वैसी ही वेदना और कातरता झलक रही थी जैसी उस वक़्त दिखाई दी थी जब बैरन ने उसकी बर्खास्तगी की पुष्टि की थी।

बेहद व्याकुल हो बैरन ने घंटी बजाकर एण्टन को बुलाया और जानना चाहा कि क्रेसेंज का सामान उसकी मेज़ पर क्या कर रहा है? नौकर फौरन अपनी दुश्मन को बुलाने चल पड़ा, लेकिन क्रेसेंज का कहीं अता-पता नहीं था—रसोईघर, सोने के कमरे और पूरे मकान में वह कहीं नहीं मिली।

दूसरे दिन तब तक उसकी कोई ख़बर पता नहीं चली जब तक उन्होंने अख़बार में छपी एक ख़बर नहीं पढ़ ली। अख़बार में ख़बर थी कि तक्ररीबन चालीस बरस की एक स्त्री ने डेन्यूब नदी में कूदकर आत्महत्या कर ली। यह पढ़कर मालिक और नौकर को पता चला कि लेपोरैला का क्या हुआ।

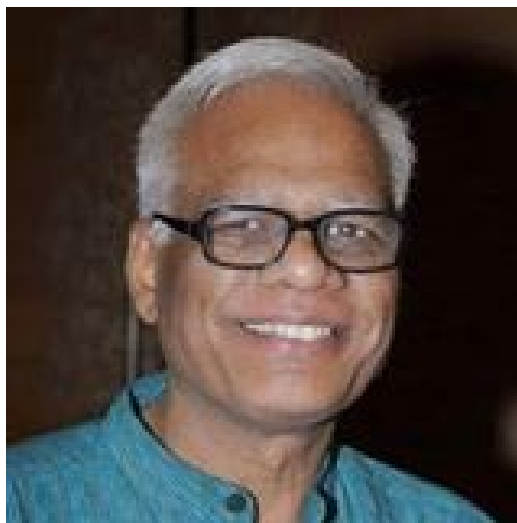
अनुराधा महेन्द्र : 1042,

कोहिनूर सिटी फ़ेज-1,

LBM मार्ग, कूलॉवेस्ट, मुम्बई-70

मो. 9819927908

कथार्थ



विष्णु नागर

## न कुछ से बहुत कुछ हो जाना

ज़िंदगी हमारी कल्पना से भी बहुत ज़्यादा दिलचस्प, रहस्यमय, विचित्र, सुंदर और उलझी हुई है, इसीलिए तो दुनिया के इतने सारे लोग इतनी तरह से उसके बारे में लिख चुके हैं और आज भी लिख रहे हैं मगर ज़िंदगी के पास हम सबको बताने के लिए अब भी इतना ज़्यादा है कि तोल्सटोय या प्रेमचंद या शेक्सपियर या निराला जैसों के बावजूद उसके पास बताने का यह सिलसिला कभी ख़त्म नहीं होगा। अभी छत्तीसगढ़ की एक घटना सामने आई है, जिसे इससे जोड़कर देखा जा सकता है और जिस पर हैंसने-रोने का मन एकसाथ करता है। हो सकता है वह घटना अख़बारों के माध्यम से आपमें से कुछ की या सबकी नज़र से गुजर चुकी होगी और संभवतः आपको वह अत्यंत साधारण घटना लगी होगी, जैसी रोज़ होती रहती हैं मगर उसने मुझे उलझा लिया है। हुआ यह कि गरियाबंद के तुम गाँव के दो लोगों से— जो अक्सर शराब में डूबे रहते हैं—उनका किसी और गाँव में रहनेवाला एक पुराना परिचित मिला। इन दोनों को किसी सरकारी पेंशन मिलने की आस रही होगी और हो सकता है उसके लिए या तो ये अधिकृत नहीं रहे होंगे या जैसा कि होता है लालफ़ीताशाही ने मामला अटका दिया होगा। ख़ैर, कारण जो भी रहे हों, किसी ने उन्हें समझा दिया कि छत्तीसगढ़ सरकार के पंचायत और ग्रामीण विकास मंत्री अजय चंद्राकर ने तुम्हारी पेंशन अटका रखी है। तो ये दोनों कृपाराम और ढेलूराम मंत्री चंद्राकर से बहुत दुखी थे। जब पास के गाँव छुरा से इनका एक परिचित जोड़दराम इनसे मिलने आया तो इन्होंने अपना दुखड़ा रोया और जोड़दराम से पूछा कि तुम्हारी निगाह में कोई अच्छा बैगा है, जो जंतरमंतर से इस मंत्री का काम तमाम कर दे!



जोइदराम भी हो सकता है, इनके साथ नशा कर रहा होगा और उसने कह दिया होगा कि हाँ, मेरी नज़र में एक है, उसे ले आऊँगा मगर मंत्री का मामला है तो बीस लाख से कम में नहीं निबटेगा। इन्होंने कहा नहीं यार, बीस लाख तो ज्यादा हैं, हम दस लाख तक का प्रबंध कर सकते हैं। जोइदराम ने कहा कि चलो दस लाख में मैं बैगा को पटा लूँगा।

इनमें से एक कृपाराम (50 वर्ष) को एक अखबार ने मज़दूर बताया है मगर दूसरे ने उसे नगर पंचायत का चौकीदार बताया है, दूसरा आदमी ढेलूराम 70 साल का बताया जाता है, जो अब शायद कुछ तामझाम न करता हो। इन्होंने दस-बीस लाख का नाम ज़रूर सुना होगा मगर ये क्या होते हैं, कैसे होते हैं, इनसे क्यों होता है, इसका अंदाज इन्हें होगा नहीं मगर फिर भी इन 'बहादुरों' ने इन्होंने दस लाख में मंत्री को मारने का सौदा कर लिया! फिर ये भी भूल गए, वो भी भूल गया! चार महीने इसी तरह बीत गए, पूरी ज़िंदगी शायद इसी तरह बीत जाती, वह तो क्या हुआ कि जोइदराम फिर से इनके गाँव आया तो अमूमन जैसा पहले भी होता रहा होगा, इनके साथ आकर वह बैठा होगा। ये दोनों शराबी बताये जाते हैं तो शराब पीते हुए किसी तरह वह पुराना मामला उठ गया होगा और इन दोनों ने जोइदराम से पूछा होगा क्यों बे तुम ये बताव कि तुम तो दस लाख में मंत्री को मरवाने के लिए एक बैगा को लानेवाले थे, फिर लाये क्यों नहीं? जोइदराम ने कोई जवाब दिया होगा, उससे ये ज्यादा नाराज़ हो गए होंगे। वह अकेला था, ये दो थे, इन्होंने जोइदराम की जमकर कुटमस लगा दी। हो सकता है उसे खून निकल गया हो, तो जोइदराम मार खाकर चुप नहीं बैठा, वह गाँव की पुलिस चौकी पर गया और उसने अपने साथ मारपीटाई की शिकायत कर दी और यह भी बता दिया कि इस कारण उसके साथ मारपीट की गई है। हो सकता है जोइदराम ने सोचा हो कि इन्हें दो-चार डंडे पड़ जाएँगे तो इनके दिमाग ठिकाने आ जाएँगे, आगे से ऐसी हरकत नहीं करेंगे मगर मंत्री का मामला था, पुलिस चुप नहीं बैठी। उसने दोनों को हिरासत में ले लिया, उसने हत्या के इरादे आदि के जुर्म में इनके विरुद्ध एफआईआर दर्ज कर ली। पुलिस को भी अच्छा मसाला मिल गया, मीडिया को भी। प्रदेश-देश के मीडिया में प्रमुखता से ख़बर आ गई, मंत्री को मारने का षड्यंत्र वगैरह। दोनों ने वक्त की नज़ाकत का फ़ायदा उठाया

और बेबात हल्ला मचा दिया। किसी को इससे क्या लेना-देना कि मामला असल में है क्या? विशुद्ध रूप से यह शराब के प्याले पर बैठकर की गई झंझटबाजी का मामला लगता है जो अक्सर होती रहती है। गाँव में क्या शहरों में भी होती है, पाँच सितारा होटलों में और निजी महफ़िलों में भी होती है। किसी ने यह भी नहीं सोचा कि जो लोग दारू पीकर मस्त रहते हैं, जिन्होंने चार महीने तक जोइदराम से मंत्री को मारने के लिए बैगा के बारे में नहीं पूछा, जिन्हें मालूम नहीं कि सौ या हजार रुपये से ज्यादा रुपया क्या, कैसा होता है, वे कहाँ से लाते दस लाख और वे मंत्री की हत्या करवाने के मामले में कितने गंभीर थे! इस बात को जोइदराम भी जानता था, इसीलिए तो दारू पीकर वायदा कर गया और भूल गया!

खैर, सबकुछ कर लेने के बाद पुलिस को समझ में आया कि इस मामले में तो कुछ भी नहीं है मगर अब क्या होता है! इन दोनों पर शायद मुकद्दमा भी चलेगा, गवाहियाँ भी होंगी और शायद इनकी ज़मानत न हो और हो जाए तो शायद इन्हें कोई ज़मानतदार नहीं मिले। कृपाराम की नौकरी चली गई होगी, शराब पीने के बावजूद जितना भी रुपया वह घर लेकर आता होगा, उससे परिवार अब वंचित होकर दुख भोग रहा होगा और हो सकता है ढेलूराम को पहली बार -वह भी 70 साल की उमर में -जेल जाना पड़ा होगा। मुफ्त में खेल-खेल में दोनों को लेने के देने पड़ गए। बस जेल में ये होगा कि शायद इनकी शराब छूट जाए क्योंकि अगर देश के दूसरे हिस्सों की तरह पुलिस वहाँ भी क़ैदियों से पैसे लेकर शराब का प्रबंध कर देती होगी तो भी इन फोकटियों के लिए इंतज़ाम क्यों करेगी? ये अगर शराब की बात करेंगे तो दो या ज्यादा लात लगाएंगी और नशा न करने का उपदेश ऊपर से देगी, जिसे चुपचाप सुनने के अलावा इनके पास चारा क्या है? नहीं सुनेंगे तो चार नहीं तो दो लात तो ज़रूर ही खाएँगे और गरीब को लात घूँसे, डंडे मारना पुलिस का जन्मसिद्ध अधिकार है, जिसे लेने के लिए उसे कभी किसी बाल गंगाधर तिलक के आह्वान की ज़रूरत नहीं पड़ी, किसी अंग्रेज़ या हिंदुस्तानी सरकार से संघर्ष नहीं करना पड़ा! उधर मंत्रीजी को मुफ्त में शहादत दिये बिना शहादत का लाभ मिल गया होगा! उन्होंने अपनी सुरक्षा बढ़वा ली होगी यानी अपना महत्त्व बढ़वा लिया होगा। हो सकता है उन्होंने भगवान से प्रार्थना की हो कि भगवान इसी तरह झूठमूठ कुछ होता रहे

ताकि एक दिन जेड सेक्यूरिटी का उनका चिरसंचित सपना पूरा हो जाए! दूसरे मंत्री उन्हें ईर्ष्या से देखें!

अभी तक हमने थोड़ा सा कुछ सोचा है, थोड़ी सी कल्पना की है, आइए, थोड़ा और इन दोनों दिशाओं में आगे बढ़ें। क्या सत्तातंत्र में बैठे इन लोगों को आज तक यह समझ में नहीं आया कि देश का कोई तांत्रिक, कोई बैगा दस लाख लेकर भी तंत्रमंत्र से मंत्री तो मंत्री, एक मक्खी तक को नहीं मार सकता! लेकिन सत्ता का अक्ल से संबंध अक्सर बहुत दूर का होता है। जब सत्ता के नभ में घनघमंड बादल गरजते हैं तो कुछ भी समझ में नहीं आता, बस, इतना समझ में आता है कि हमारे पास सत्ता है और दूसरों के पास नहीं है, हम जो चाहे कर सकते हैं, दूसरे हम जो चाहें सह सकते हैं!

इन दोनों की गिरफ्तारी के बाद इस सवाल पर सोचने की अब जरूरत नहीं रह गई कि आखिर उस पेंशन का सच्चा-झूठा मामला क्या था, जिसने इतने बड़े प्रहसन को जन्म दिया, जिसमें कम से कम दो लोग- जो निरपराध हैं- मगर प्रताड़ित होंगे। अदालत और पुलिस दोनों बिना बात इस केस में उलझी रहेंगी और ये दोनों गरीब जेल में सड़ते रहेंगे, इसी तरह के कुछ और लोगों की तरह जो इन्हीं की तरह गरीब होंगे। कुछ लोग कहेंगे कि ये सब शराब के कारण हुआ। न ये शराब पीते, न इतना होश खोते कि मंत्री को मारने की कल्पना करते मगर मैं कहूँगा कि यह शराब

का नहीं गरीबी का मामला है, जो गरीबी पहले और तरह से इन्हें हैरान-परेशान करती थी, अब उसने इन्हें जेल पहुँचा दिया है, जहाँ से उनकी मुक्ति अब आसान नहीं लगती।

आपने गौर किया कृपाराम, ढेलूराम और जोइदराम नामों पर? तीनों ही राम हैं, तीनों ही गरीब हैं और शायद तीनों ही शराब पीकर होश खोते रहे हैं। चलो कृपा के साथ राम लगा हुआ तो अकसर हमने पहले भी सुना होगा मगर ढेलू भी राम हो सकते हैं और जोइद भी राम हो सकते हैं, यह थोड़ा दिलचस्प लगता है। राम का नाम ढेलू और जोइद से जुड़ने से पता नहीं हिंदुत्ववादियों को खुशी होगी या नहीं होगी, मैं नहीं जानता। मैं तो इन नामों को राम के नाम के एक और तरह के विस्तार के रूप में देखता हूँ। ढेलू शायद ढेले से बना होगा और ढेले में राम शब्द जुड़ गया तो वह एक नाम हो गया। मुझे नहीं मालूम कि छत्तीसगढ़ी में जोइद शब्द का कोई अर्थ होता है या नहीं मगर उसके पीछे भी राम लगा और एक आदिवासी का नाम बन गया! कितना दिलचस्प और कितना जीवंत है नामों का यह संसार भी, जहाँ कोई भी शब्द अपने पीछे राम को जोड़कर किसी आदमी की जीवन के साथ और जीवन के बाद भी उसकी पहचान बन जाता है, भले ही उसके जीवन का त्रासद अंत जेल में होता हो!

---

A-34, नवभारत टाइम्स कॉलोनी,  
प्लॉट न. 4, मयूर विहार, फेज I,  
नोएडा रोड, नई दिल्ली- 110091  
मो. न. - 9810892198

## नान्दी-पाठ



लीलाधर मंडलोई

प्रिय संपादक,

मैं पाठकों का ध्यान एक अनुकरणीय और रोमांचक कृतित्व कथा- 'शब्दवेध' की ओर आकृष्ट करना चाहता हूँ। यह अरविंद कुमार के जीवन के संघर्षपूर्ण जीवन का दस्तावेज़ है। शब्दों के सम्पूर्ण जीवन समर्पण की अनोखी दास्तान। इस किताब में उनके जीवन के अनथक 70 वर्षों की आपबीती है। यह बेहद मार्मिक जीवनवृत्त है। हिंदी थिसारस के सर्जक को जानने की अकेली किताब। बड़बोलेपन से मुक्त विनम्र अभिव्यक्ति। हिंदी भाषा को उनके अवदान की ऐसी कथा जिसमें इस इलाके में काम करने वाले पूर्व वैयाकरण और भाषाविज्ञानियों के प्रति कृतज्ञता भाव है।

कोषकारिता में ऐतिहासिक काम करने वाले अरविंद कुमार ने थिसारस का सपना 23 साल की उम्र में देखा। रोजी-रोटी के फेर में शब्दों की दुनिया में मात्र 15 साल में बाल श्रमिक के रूप में प्रवेश किया। वह लुटियंस की दिल्ली का कनॉट प्लेस (जनपथ) था। 'सरिता' और 'कैरेवान' पत्रिकाओं का संपादकीय और व्यवस्था कार्यालय। कार्यालय तक पाँव-पाँव सफ़र सुबह व शाम। शब्दों की दुनिया के कई काम इस बालश्रमिक के हिस्से आए- मोनी कंपोज़िंग, मशीन मैनी, जिल्दसाज़ी, ब्लाक मेंकिंग, टाइपिंग, प्रूफ़ रीडिंग आदि। वहाँ एक अधोषित शोषण भी था उन सीनियर्स का जो अपने अतिरिक्त काम और सेवादारों के काम बालक अरविंद कुमार को साँपकर 'सेडिस्ट प्लेजर' का अनुभव करते थे। उनके जीवन का एक ही मंत्र रहा- 'रोने-धोने और झींकते रहने से क्या फ़ायदा ?

जो करना है, वह करना है और मन लगाकर करना है।' यह जो मन था वह शब्दों के संज्ञान में डूबता-उतराता रहा। 'अखरावट' (अक्षर लिखने की शैली) का छापेखाने में काम करते हुए पहले अक्षरों की महिमा की तरफ़ खुद को उन्मुख किया, फिर शब्दों के भावों में उन्होंने अपना घर बनाना शुरू किया जो थिसारस के स्वप्न में तब्दील हुआ।

सरिता, मुक्ता, कैरेवान से लेकर माधुरी संपादक तक का उनका सफ़र हिंदी वालों के लिए ईर्ष्या का कारण हो सकता है और रहा। खासकर फ़िल्म जगत के नामवर-नामचीन अभिनेताओं-अभिनेत्रियों, निर्देशकों, संगीत निर्देशकों से लेकर हर वो व्यक्ति जो फ़िल्मों से लोकप्रिय हुआ, अरविंद कुमार से सीधे संपर्क में रहा जिसका बयान इस कृति का एक हिस्सा है और वह बिना किसी आत्म गौरव गान के। यह चमक-धमक भरी दुनिया उन्हें फिज़ूल लगने लगी और एक दिन उनका मोहभंग हो गया। माधुरी के संपादन और ऐश्वर्य के फ़िल्मी लोक को छोड़कर वे हिंदी थिसारस के स्वप्न को मूर्त करने, अपने परिवार-पत्नी, नन्हें बच्चों और बिल्ली को लेकर भीषण गर्मी में निकल पड़े। उनकी अपनी एंबेसेडर (एयर कंडीशनर, ए.सी. विहीन) की यात्रा की मारक स्मृतियाँ हैं लेकिन दुख में आनन्द के साथ। पाठकों के लिए यात्रा वृत्तांत का हिस्सा अरविंद कुमार भाषाविद, कोषकार के साथ उस ड्राइव्वर अरविंद का भी है, जिसकी जिजीविषा के दर्शन वृत्तांत के पाठ में अभिव्यक्त हैं। इसे पढ़कर जानें तो बेहतर। बस एक छोटी सी बानगी-

'इस से कठिन, कष्टकर, चुनौती भरा, उत्कट, कड़ियल सफ़र मैंने अब तक कभी नहीं किया, रास्ता तो मैदानी था, लेकिन विंध्याचल के तपते पथरीले रास्तों से भी कठिन निकला। बेहद गरमी थी। भरी दोपहर, तपता तीसरा पहर। ऊपर धूप जला रही थी, नीचे सड़क भून रही थी। बीस तीस किलोमीटर चल कर कार के रेडिएटर का पानी सूख जाता। बोनट उठाकर उसे ठंडा करते। किसी जोहड़ या कूएँ से लाकर पानी डालते। फिर चल पड़ते।

कार में गरमी से सब का बुरा हाल था। रूपा तो मानो साँसें गिन रही थी। कभी सुमीत तो कभी मीता उसे गीले तौलिए में लपेटे बैठे रहते। आगे की सीट पर बाईं ओर से कुसुम मुझे पंखा झलती रहती। नीचे सड़क की गरमी से

फ़र्श जल रहा था। मेरे तलवे भुनने लगते। नीचे गीले तौलिए रखे गए, और कुसुम बार बार उन्हें गीला करती रही।'

फिर से बेरोजगार, कम पूंजी, घर-बेघर अरविंद कुमार के विस्थापन, संघर्ष का क्रिस्सा लोमहर्षक हो जाता है। उनके संघर्ष के दिन सपरिवार बड़े कष्ट और इम्तहान भरे थे एक और वृत्तांत का यह अंश देखें-

'1978 के सितंबर के महीने में हमारे मुहल्ले माडल टाउन में अधरात भयंकर बाढ़ आ गई। जिस हिस्से में हम रहते थे, वह सात फुट तक यमुना के पानी में डूब गया। हम सब ने वहाँ उसी मियानी में शरण ली। मियानी में सारे कार्ड एक तरफ़ कर दिए गए। फ़र्श पर बिस्तर बिछाए गए। नीचे से गैस का सिलेंडर और चूल्हा पहले ही ले आए थे। आटा, मिर्च-मसाले, दाल चावल... वहीं बनाना वहीं खाना। कुछ देर बाद याद आया कि नीचे कमरे में हमारे सारे दस्तावेज रखे हैं। डाकखाने में डिपाजिट के क्रागज, कुछ कंपनियों में सूद पर लगाए पैसों के प्रमाणपत्र। मैं और कुसुम बाढ़ के पानी में अँधेरे में टटोलते टटोलते लोहे की अलमारी तक पहुँचे। क्रागजात ऊपर वाले खाने में रखे थे। सही सलामत मिल गए। जान में जान आई।

हमारे सभी पड़ोसी बाढ़ से परेशान थे। हम इस मनोकल्पना से खुश होते रहते कि पानी से घिरे मकानों वाले इतालवी पर्यटन स्थल वेनिस में रह रहे हैं।'

अरविंद कुमार अपनी पत्नी और पुत्र के साथ हिंदी थिसारस तैयार करने में 20 वर्ष साधना करते हैं। अरविंद कुमार हिंदी के साधक कोषकार भर नहीं अपितु तपस्वी में चुपके-चुपके रूपांतरित होते जाते हैं, जो सहृदय पाठक सहजता में पाठ के उपरांत ही समझ सकता है। मैं 'शब्दवेध' की कथा नहीं दोहरा रहा बल्कि किताब के पाठ के लिए एक आधारभूमि देने की चेष्टा में हूँ।

'थिसारस' न केवल सामान्य पाठक, विद्यार्थी और हिंदी के हर लेखक के लिए शब्द के सही भाव तक पहुँचने और समझने के लिए अब तक की अनंतिम किताब है। सिर्फ़ इतना ही नहीं कोषकारिता के इतिहास में 'अरविंद लैक्सिकन' दस लाख से अधिक अभिव्यक्तियों वाला अपना हिंदी-इंग्लिश डाटाबेस है जिनसे सभी कोषों का एक तरह

से जन्म हुआ है। जिसे पाठक किताब को पढ़ने के उपरांत अपनी तरह से समझ पाएँगे।

शब्दों से उत्कट प्रेम और लगाव के आखिरी उदाहरण की तरह अरविंद कुमार हमारे बीच अब भी सक्रिय हैं विश्वकोष के महास्वप्न को देखते हुए। 'अमरकोश' और 'रोजेट' के अंग्रेजी थिसारस से शब्द की भाव महिमा को अगोरते-अबेरते वे अपने काम को अनंत विस्तार देते हुए, इन दोनों से आगे और मौलिक निजता में बहुत दूर निकल आये हैं। इसे आप 'शब्दवेध' पढ़कर ही जान पाएँगे।

मैं पाठकों से गुजारिश करूँगा और खासकर अपने युवा लेखक दोस्तों से कि शब्दों के संकुचन और अभाव के इस दौर में अरविंद कुमार के कम से कम 'समांतर कोश' (हिंदी थिसारस) को भाव समृद्धि और सही भाव चयन के लिए अपने सिरहाने रखें। हाँ, 'शब्दवेध' को जरूर पढ़ें

ताकि आपको लेखन में अपने होने, न होने, करने-ना करने के रास्ते का अनुभव हो सके।

इस स्तंभ की शुरूआत 'नान्दी पाठ' से करते हुए मुझे आत्मिक सुख-संतोष है। मेरी दृष्टि में अरविंद कुमार की कोषकारिता उस घट (कलश) की भांति है जिसमें विष्णु, रुद्र, मातृगण, समस्त देवी-देवताओं, समस्त सागर-सप्तद्वीप, वेदों-पुराणों और लोक के शब्दों से भावों तक की मांगलिक यात्रा का कोष है।

इस कोषकारिता तक पहुँचने तक इस आत्म कथात्माक कृति का पाठ अपरिहार्य होगा। यह विनम्र संकोच के साथ लिखी गयी ऐसी कृति है जो इस विषय पर दूसरी नहीं बल्कि पहली है और शायद आखिरी हो जब तक दूसरा अरविंद कुमार न आये।

**लीलाधर मंडलोई**

---

मो. न. 9818291188

रचना समय  
का  
अगला अंक  
अगस्त - सितम्बर 2016  
मिशेल फूको  
विशेषांक

अनुवाद  
पुनर्वसु जोशी

यह प्रति 150/-

सम्पर्क  
हरि भटनागर  
बृजनारायण शर्मा

9424418567, 9826244291  
haribhatnagar@gmail.com



# माँ का दूध पिलायें बच्चे को तन्दुरुस्त बनायें

- प्रसव के एक घंटे के भीतर नवजात शिशु को अपना गाढ़ा, पीला पौष्टिक दूध (कोलस्ट्रम) अवश्य पिलाएँ।
- जन्म के तुरंत बाद से छः माह तक शिशु को सिर्फ माँ का दूध ही पिलाएं।
- छः माह तक शिशु को ऊपरी आहार, पानी, शहद, घुट्टी इत्यादि न दें।
- छः माह की आयु के उपरान्त स्तनपान के साथ-साथ शिशु के विकास के लिए उपयुक्त एवं पर्याप्त पूरक आहार (दलिया, खिचड़ी, भाप में पके फल, खीर) खिलावें।

याद रखें: सिर्फ माँ का दूध ही शिशु को पूरा पोषण देता है और बीमारियों से बचाता है।  
आपात स्थितियों जैसे दस्त, बुखार इत्यादि में भी शिशु द्वारा स्तनपान जारी रखें...

1 से 7 अगस्त 2016 विश्व स्तनपान सप्ताह



राज्य स्वास्थ्य सूचना शिक्षा संचार ब्यूरो, संचालनालय स्वास्थ्य सेवाएँ, मध्यप्रदेश



# Widen your Horizon of Success

Proud to be India's  
leading university



**A**ISECT University is India's first skills-based university which has affiliation with ANSDC. It uniquely provides students a chance to graduate and prepare them for the changing professional world. AU aims to transform the lives of students by imparting entrepreneurial skills and technical knowledge, thereby making them responsible professionals who can contribute to the industry's growing demand.

## Rise to Lead with AISECT University

**32** Skill Courses in India's first skills based university

**Research Hub** of India

**Technology** based learning methodology

**16** Start-up ventures for entrepreneur programme with Young India

Hands-on experience with **Industry bigwigs**

**Winner** of National and International awards

**3** Villages adopted with Health Camps, Education Camps, Cleanliness Drive & Women Empowerment Camps

Educational/Cultural Exchange and Research programme with **International Universities**

**India's first** skills-based university

## GLIMPSES OF AISECT UNIVERSITY



Students in computer lab



Guest speaker at International Conference



Tisca Chopra with VC, Professor V.K. Verma at AISECT Women Achievers Summit 2016



Sam Cawthorn being greeted by the staff at AU

## Global University Linkages

- ICE WaRM (Australia)
- University of Siegen (Germany)
- Rensselaer Polytechnic Institute (USA)
- KAIST (South Korea)
- KYIV University (Ukraine)
- NCTU (Taiwan)
- Tribhuvan University (Nepal)

Microsoft Ed-Vantage Platinum Partnership



Ranked by **Careers360**, as **Transcending Regional Roots** in Central India under Outstanding Universities- Regional & Young Institutions.

## Awards and Accolades



World Education Award 2016 (Dubai) for Progressive Higher Education Institutions Operating in Private Space



World Education Award 2015



ASSOCHAM Excellence in Education Award 2014



Shiksha Ratna Award 2012



Felicitation in 2014 for the Pioneering Initiative of Accepting NIELIT Qualifiers for Higher Courses

**AISECT UNIVERSITY**  
Where aspirations become achievements.  
Approved by: AICTE, NCTE, BCI, M.P. PARAMEDICAL COUNCIL  
Recognized by: UGC | Member of: AIU



AISECT University, Bhopal-Chiklod Road, Near Bangrasia Chouraha, Village - Mendua, Post - Bhojpur District - Raipur, Pin - 464993, MP, India. Ph.: 0755-6766100, 295707 City Office: 3<sup>rd</sup> Floor, Samath Complex, Board Office Square, Shivaji Nagar, Bhopal - 462016, Ph.: 0755-2460968, 4289606. Email: info@aisectuniversity.ac.in | www.facebook.com/AISECTUni | www.youtube.com/user/aisectuni

## COURSES OFFERED 2016-2017

### Engineering & Technology

#### B.E.

CS | EC | IT  
Mechanical | Civil  
Electronics & Electrical

#### M. Tech.

CS | VLSI | Civil  
Thermal Engg.  
Production Engg.  
Wireless & Mobile Comm.  
Power Systems

#### Diploma

Civil Engg.  
Mechanical Engg.  
Electronics & Electrical Engg.

### Management

MBA

BBA

M.Phil. (Management)

### Education

B.Ed | B.P.Ed | M.Ed\*

B.Ed (Part Time)\*

### Law

B.A. (LL.B.)

LL.B. | LL.M.

### Arts

B.A. | M.A. (Hindi, English, History, Political Science, Sociology)  
MSW | B.Lib.Sc.  
M.Lib.Sc. | M.Phil. (Hindi, English, History, Political Science, Sociology)

### Commerce

B.Com.

B.Com. (Computer App.)

M.Com.

M.Com. (Taxation)

M.Com. (Management)

M.Phil. (Commerce)

### Computer Science & IT

DCA | PGDCA | BCA

B.Sc. (IT) | B.Sc. (CS)

M.Sc. (IT) | M.Sc. (CS)

M.Phil. (IT) | M.Phil. (CS)

### Paramedical

Bachelor of Physiotherapy

Diploma in Medical Laboratory Technician

**Certificate in**

Yoga

Naturopathy

X-Ray Technician

Operation Theater Technician

C.T.M.R.I

### Science

#### Physics

B.Sc. | M.Sc.

M.Phil. (Physics)

M.Phil. (Electronics)

#### Chemistry

B.Sc. | M.Sc. | M.Phil.

#### Mathematics

B.Sc. | M.Sc. | M.Phil.

#### Biology

B.Sc. | M.Sc. | M.Phil.

#### Botany

M.Sc. | M.Phil.

#### Zoology

M.Sc. | M.Phil.

#### Agriculture

B.Sc.

#### Nursing

B.Sc.\* | GNM\*

**Ph.D. in select subjects through separate entrance test.**

For detail Contact 09893350135, 09993233374, 09425647748, 09827228290

For more details just give a MISSED CALL to 7828244244

www.aisectuniversity.ac.in

राधिका माहेश्वरी, स्वामी एवं प्रकाशक के लिये बाक्स कोरोगेटर्स एण्ड आफसेट प्रिन्टर्स, 14-बी, आई सेक्टर, औद्योगिक क्षेत्र गोविन्दपुरा, भोपाल द्वारा मुद्रित एवं द्वारा 107, शांति नगर कालोनी, बैरसिया रोड, भोपाल - 462018 से प्रकाशित। संपादक : बृजनारायण शर्मा